शिक्षाका विकास

[साबरमतीसे सेवाग्राम]

कि० घ० मशरूवाला



नवजीवन प्रकाशन मन्दिर
अहमदाबाद

शिक्षाका विकास

[साबरमतीसे सेवाग्राम]

लेखक

कि० घ० मशरूवाला

अनुवादक

रामनारायण चौधरी



नवजीवन प्रकाशन मन्दिर

अहमदाबाद

मुद्रक और प्रकाशक
जीवणजी डाह्याभाई देसाई
नवजीवन मुद्रणालय, अहमदाबाद – १४

पहली आवृत्ति, ३०००

सवा रुपया

मार्च, १९५६

प्रस्तावना

'शिक्षामे विवेक' की तरह अिस पुस्तकमें भी अधिकतर मेरे पुराने लेखोका ही सग्रह है। कॉलेजके दिनोसे ही प्राथमिक शिक्षाके प्रश्नने मेरे हृदयमे स्थान बना लिया था। जब मै अिटर या जूनियर बी० अे० मे था तब अिस विषय पर मैने अेक निबध पढा था, और अुसमे भी मुझे याद है कि मैने औद्योगिक शिक्षा, हिन्दी, ग्रामजीवन-सुधार वगैराके बारेमे कुछ योजना पेश की थी। वह निबध तो मेरी अुस समयकी बुद्धिके अनुसार ही लिखा गया होगा। परन्तु शिक्षाके क्षेत्रमे जीवनका अुपयोग करनेकी अभिलाषा अुस समयसे ही मनमे पोषित होती रही थी।

सत्याग्रहाश्रमकी राष्ट्रीय शालामे शरीक हुआ, तब अुस अभिलाषाको मूर्तरूप मिला। राष्ट्रीय शालासे गूजरात विद्यापीठमे काम करनेका अवसर आया, तब विद्यापीठकी पाठशालाओंके अुस समयके निरीक्षक श्री कालिदास वसनजी दवेने 'नवजीवन' की पूर्तिके रूपमे 'विद्यापीठ शिक्षा-अक' के नामसे मासिक जारी किया। अुसमे मैं कभी कभी अपने विचार पेश करने लगा। अुसके बाद अथवा साथ साथ 'नवजीवन' तथा दूसरे भी कुछ पत्रोमे या प्रसगो पर मै अपने ये विचार प्रकट करता रहा। अुनमे से कुछका सग्रह 'तालीमकी बुनियादे'* मे हुआ। वह सग्रह अेक विशेष दृष्टिसे किया गया था। अिसलिअे अुसमे मेरे सभी लेख नही लिये गये थे।

अिसके बाद कुछ वर्ष बीत गये। १९३० के बादके आन्दोलनके पश्चात् शिक्षाके क्षेत्रमे मेरा प्रत्यक्ष भाग लेना बद हो गया। १९३४ मे तो मै वर्धा आ गया। वर्धाने मुझे गाधी-सेवा-संघके क्षेत्रमे धकेल दिया। परन्तु अिसी बीच गाधीजीकी 'बुनियादी शिक्षा' की विचारसरणी आरभ हो गअी। अुसकी पहली परिषद्मे मै अुपस्थित तो नही रह सका, परन्तु जाकिरहुसेन कमेटीमे अपना नाम रखा हुआ देखा।

---

* यह पुस्तक हिन्दीमे सुविधानुसार जल्दी ही प्रकाशित होगी।

अिस प्रकार मेरे लिअे फिर शिक्षाके विषयका ध्यान करनेके अवसर आये; और कभी-कभी लिखने या बोलनेके प्रसग भी अुपस्थित हुअे। ये लेख अधिकतर 'हरिजनबन्धु', हिन्दी 'सर्वोदय' या गुजराती मासिक 'शिक्षण अने साहित्य' मे और कभी-कभी दूसरे पत्रोमे भी प्रकाशित होते थे। १९४२ के आन्दोलनसे पहले 'रचनात्मक कार्यक्रम' पर अिन दोनो मासिकोमे मैंने अेक लेखमाला आरभ की थी। अुसमे शिक्षाके विषय पर प्रकरण लिखे जा रहे थे कि अितनेमे आन्दोलन शुरू हो गया और जेल चला जाना पडा। जेलसे छूटनेके बाद लेख-माला जारी रखनेकी सूचनाये मिली, मेरी अिच्छा भी थी, परन्तु अुस विषयका ध्यान खडित हो गया और परिस्थिति भी बदल गअी, अिसलिअे वह काम रह गया सो रह ही गया।

अिन सब लेखोका सग्रह अव्यवस्थित रूपमे सुरक्षित पडा था। यह सभव नही था कि मै स्वय अुन सबको व्यवस्थित करके छापू और प्रकाशित करू। अिसलिअे मैंने सारी सामग्री श्री रमणीकलालभाअी मोदीको सौप दी। अुन्होने परिश्रम अुठाकर अुन सबको व्यवस्थित किया। लेखोको क्रमश. जमाया, अुनके भाग किये। जो अब बेकार हो गये मालूम हुअे, अुन्हे मुझे बताकर रद्द किया। सुधारने जैसे लगे अुन्हे मुझसे सुधरवा लिया, अधूरे लगे अुन्हे पूरा करा लिया। और फिरसे व्यवस्थित रूपमे जमाकर मेरे देखनेके लिअे भेज दिये।

अैसा प्रतीत हुआ कि अुनके 'शिक्षामे विवेक' और 'शिक्षाका विकास' जैसे दो स्वतत्र भाग हो सकते है। अिसलिअे तदनुसार व्यवस्था कर दी। अिस प्रकार श्री रमणीकलालभाअी मोदीके परिश्रमसे ही मेरे तमाम पुराने लेखोका सशोधन और सपादन हो रहा है।

लेखोकी जाच करते-करते ही मैने देख लिया कि वर्धा-योजनाका बीज साबरमतीमे ही बोया जा चुका था। 'तालीमकी बुनियादे' पुस्तककी प्रस्तावनामे भी अिसका अुल्लेख तो है ही। परन्तु जैसा कि श्री नर-हरिभाअी परीखने लिखा है, अुद्योग और 'साक्षरी' (पुस्तकीय) शिक्षाके

बीच तथा शिक्षाके विषयो और प्रत्यक्ष जीवनके बीचके मेलका विचार पूरी तरह विकसित नही हुआ था, अच्छी तरह सूझा भी नही था। वह धीरे-धीरे किस तरह सूझता गया और विकसित होता गया, यह अनायास अिस पुस्तकमे दिये गये लेखोको दुबारा पढने पर मेरे ध्यानमे आया। अिसलिअे अिस सग्रहको 'शिक्षाका विकास' नाम दिया गया है।

शिक्षाके कार्य और विचारोके आदान-प्रदानमे श्री नरहरिभाअी परीखका और मेरा साथ सबसे अधिक रहा है। वैसे तो काकासाहब और विनोबा भी अुतने ही पुराने साथी है। परन्तु कोचरब (अहमदाबाद) की राष्ट्रीय पाठशालामे शरीक हुआ, तबसे श्री नरहरिभाअीके और मेरे बीच अिस विषयमे जितनी चर्चाअे हुअी अुतनी शायद औरोके साथ नही हुअी। साबरमती आश्रममे चोरोके अुपद्रवके कारण आश्रमवासियोको कअी बार जोडी बनाकर पहरा देना पडता था। अुसमे घटे दो घटेका समय हमारे हिस्सेमे आता था। भरसक हम दोनो अेक ही जोडीमे रहनेकी व्यवस्था करते थे। हमारा रातका चारो ओर फैली हुअी शान्तिका यह समय शिक्षा और अर्थशास्त्रके विविध सिद्धान्तो और समस्याओ आदिका सहचिन्तन करनेमे जाता था। मेरी और अुनकी विचारसरणी क्वचित् ही भिन्न पडती होगी। सन् १९४७ मे अेक दो मास मै अुनके यहा साबरमतीमे रहा था। अुस समय अिस सग्रहके कुछ लेखोकी फाअिल मैने अुन्हे पढनेको दी थी। अुस समय वे गुजरात बेसिक अेज्युकेशन बोर्डके अध्यक्ष थे। अुसी समय हमारे ध्यानमे आया कि यह सग्रह प्रकाशित हो तो 'नअी तालीम' के शिक्षकोके लिअे अुपयोगी होनेकी दृष्टिसे अुसमें पूर्तिरूप कुछ लिखनेकी जरूरत होगी। मुझसे यह काम हो नही सकता था। अत. मैने अुस समय अुनसे अनुरोध किया था कि यह काम अुन्हीको करना पडेगा और अुन्होने मेरा अनुरोध स्वीकार किया था। बादमे वे अितने बीमार हो गये कि यह अिच्छा पूरी होनेकी आशा ही नही रही। परन्तु अीश्वरेच्छासे यह सग्रह

छपनेमे विलब हुआ। अिस बीच श्री नरहरिभाअीका स्वास्थ्य काम करने लायक सुधर गया और किया हुआ सकल्प पूरा हुआ।

अिस प्रकार अिस पुस्तकको श्री नरहरिभाअीकी पूर्ति प्राप्त हुअी। परन्तु अुसे पूर्तिके रूपमे देनेकी अपेक्षा भूमिकाके रूपमे देना अधिक अुपयुक्त होगा, वह पाठकको बादके लेखोके लिअे तैयार करती हे। अिसलिअे मैने अुसे भूमिकाके रूपमे छापनेका निश्चय किया है।

अिस भूमिकाका पहला प्रकरण 'नअी तालीम' के मुद्दो, अुसकी कठिनाअियो और अुपायोकी चर्चा करता है। तथा दूसरे प्रकरणके विषयमे थोडा स्पष्टीकरण अुन्होने किया ही है। अुसमे दो वाक्य और जोड दू। मैने जाकिरहुसेन कमेटी द्वारा तैयार किये हुअे अितिहासके पाठ्यक्रमसे भिन्न प्रकारका अपनी दृष्टिका पाठ्यक्रम तैयार किया था। अुस पाठ्यक्रमकी कुछ नकले करवा ली थी। वह पाठ्यक्रम श्री नरहरिभाअीका देखा हुआ था और बहुत सभव है गुजरात बेसिक अेज्युकेशन वोर्डका पाठ्यक्रम तैयार करनेमे अुसका अुपयोग भी किया गया था। वह पाठ्यक्रम कुछ जल्दीमे तैयार किया गया था और अधूरा भी होगा। परन्तु मुख्य बात कालक्रमकी थी। मेरा मानना है कि भूगोलकी तरह अितिहासका ज्ञान भी समीपसे शुरू करके पीछेकी तरफ जाना चाहिये। छोटे बच्चोको प्राचीन मनुष्योकी बाते कहनेसे अुनके मनमे गलत चित्र ही अुत्पन्न होते है और वे बडी अुम्रमें भी वैसे ही बने रहते है। जैसे पण्डितोकी नजरके सामने भी बचपनमे पढ़े या सुने हुअे गिरधर कवि* या शामल भट्टके* हनुमान और रावणके चित्र ही तैरते रहते है, वैसे बालकोके मनमे प्राचीन मनुष्योके बारेमे विकृत चित्र ही खडे होते है। और, चाहे दस लाख वर्ष कहिये या दस हजार वर्ष कहिये, दोनोके बीचके भेदकी या अुनकी प्राचीनताकी कोअी स्पष्ट कल्पना तो अुन्हे हो ही नही सकती।

---

* गुजराती भाषाके प्राचीन कवि, जिन्होने रामायणको गुजरातीमें पद्यबद्ध किया है।

अिस प्रकार यह व्यवस्थित ढगसे गलत अितिहास सिखानेकी पद्धति बन जाती है। अिसलिअे अपने आसपासके और निकट समयके अितिहाससे शुरू करके धीरे-धीरे दूरके देश और दूरके समयकी तरफ जाना चाहिये। दुर्भाग्यसे मैं अपनी यह दृष्टि जाकिरहुसेन कमेटीके अधिकाश लोगोको समझा नही सका। केवल विनोबाने मेरी यह दृष्टि मान्य की, परन्तु वे अुसकी आखिरी बैठकमे अुपस्थित नही थे और दूसरे सदस्योने या तो अुसे स्वीकार नही किया या अुसका आग्रह नही रखा।

अिस पाठ्यक्रमकी नकले व्यक्तिगत रूपमे किसी किसीने मुझसे मगवाअी थी। और मेरा खयाल था कि अुसकी अेकाध नकल मेरे पास जरूर होगी। परन्तु मेरे सग्रहमे वह नही मिली। अिसलिअे मैंने श्री नरहरिभाअीको अिस विषयमे स्वतत्र चर्चा करनेका सुझाव दिया। पाठक देखेगे कि वह चर्चा अुन्होने सागोपाग रूपमे भूमिकाके दूसरे प्रकरणमे की है। अुसमे विनोबाके विचार भी गूथ लिये हैं। अनायास अुसमे अितिहास-सम्बन्धी मेरे तीनो मतव्योकी चर्चा भी आ जाती है। अेक, जैसा अूपर कहा गया है, अितिहासकी शिक्षाका देश और कालकी दृष्टिसे आरभस्थान; दूसरा, अितिहासके ज्ञानकी अुपयोगिताके बारेमे 'जडमूलसे क्रान्ति'[1] मे प्रगट किये गये विचार; और तीसरा, 'तालीमकी बुनियादे' पुस्तकमे 'अितिहासकी शिक्षाके विषयमे दृष्टि'[2] मे बताया गया निम्न विचार :

---

१. नवजीवन द्वारा प्रकाशित; कीमत १–८–०, डाकखर्च ०–६–०।

२. यह लेख आज पढने पर देखता हू कि 'जडमूलसे क्रान्ति' में अिस विषय पर प्रकट किये गये विचार अिस लेखमे अधिक विस्तारसे आये हैं। फिर भी खूबी यह है कि 'जडमूलसे क्रान्ति' के अिस प्रकरणकी खूब चर्चा हुअी और 'तालीमकी बुनियादे' वाले प्रकरण पर किसीने कोअी आलोचना नही की।

"हमे भूतकालके अनुभवोके — अितिहासके — ब्योरोंकी स्मृति नही है। परन्तु अुन अनुभवोके द्वारा किये हुअे परिवर्तनोको हमने अिस जीवनमे भी अनुभव किया है, और हमारी वर्तमान स्थिति अुन सस्कारोका ही फल है। अिति-हासका ज्ञान हमे भले न हो, परन्तु अितिहासका परिणाम क्या हुआ, यह हमसे अज्ञात नही है। वह हमारा आजका जीवन है।

"व्यक्ति और समाज दोनोको यह तत्त्व लागू होता है।"

अिस प्रकार **श्री** नरहरिभाअीकी भूमिका ही अिस पुस्तकको नवीनता प्रदान करती है। अुसे व्यवस्थित रूप **श्री** रमणीकलालभाअी मोदीके द्वारा प्राप्त हुआ है। फिर भी पुस्तकका कर्ता मै माना जाअूगा! कर्ता कैसे केवल निमित्त ही होता है, अिसका यह अुदाहरण है।

वर्धा, २–६–'५० **कि० घ० मशरूवाला**

अनुक्रमणिका

भूमिका

लेखक
नरहरि द्वा० परीख

१

नअी तालीम और स्वावलंबन

१

नअी तालीमका बीज

श्री किशोरलालभाअीकी अिस पुस्तकमे शिक्षा-सम्बन्धी, विशेषत. 'नअी तालीम' अथवा नअी शिक्षा सबधी लेखोका सग्रह है। कुछ लेख तो 'नअी तालीम' के नामसे परिचित शिक्षाकी क्रान्तिकारी प्रवृत्ति आरभ हुअी अुससे पहलेके लिखे हुअे है। परन्तु अिन लेखोकी विचारसरणी अुसी दिशामे ले जानेवाली है। गाधीजीने हम सबके द्वारा साबरमतीमे शिक्षाका जो प्रयोग शुरू किया, अुससे अुनका सेवाग्रामका प्रयोग किस तरह फलित हुआ, अिसकी अिन लेखोसे कुछ झाकी मिलती है। अिसलिअे अिस पुस्तकको अुन्होने 'शिक्षाका विकास' जो नाम दिया है वह सर्वथा अुचित है। चूकि ये लेख भिन्न भिन्न समय और भिन्न भिन्न अवसरो पर लिखे गये थे, अिसलिअे अेक निबधमे विषय-प्रतिपादनकी जो अेकसूत्रता होती है वह अिनमे नही आ सकी। परन्तु अेक या दूसरे स्थान पर सब मुद्दोकी चर्चा थोडी बहुत मात्रामे अिसमे आ जरूर जाती है। श्री किशोरलालभाअीने मुझसे कहा कि 'नअी तालीम' –– जो वर्धा शिक्षा योजनाके नामसे भी पहचानी जाती है –– की चर्चा करनेवाला अेक पूरा लेख अथवा निबध अिस सग्रहकी पूर्तिरूपमें मै लिखू। अुन्होने जो कुछ कहा है अुससे नया अथवा अधिक मुझे कुछ कहना नही है। श्री किशोरलालभाअीमे मौलिक रीतिसे विचार करनेकी और विषयके मूल तक पहुच कर अुसका सूक्ष्म पृथक्करण और विशद विवेचन करनेकी जो शक्ति है, वह भी मुझमे नही है। फिर भी कुछ न कुछ लिखना मैने स्वीकार किया। गाधीजीने अपनी शिक्षा-योजनामे स्वावलबनको विशेष महत्त्वकी वस्तु मान कर अुस पर जोर दिया है। परन्तु अुस पर सफल रूपमे अमल हुआ

कही दिखाअी नही देता। जो स्वावलबनके अिस तत्त्वको मानते है, वे भी अिसमे सफलता प्राप्त नहीं कर सके। बहुतोने तो स्वावलबनके तत्त्वको छोड कर ही गाधीजीकी योजना स्वीकार की है। मैंने अिस लेखमे अिस बातकी चर्चा की है कि गाधीजी अिस योजना पर कैसे पहुचे, स्वावलबनको वे क्यो महत्त्वपूर्ण मानते है और अुसे सिद्ध करनेके लिअे किस प्रकारके प्रयत्न होने चाहिये।

सबसे मूल्यवान भेंट

जब गाधीजीने नअी तालीमका विचार शिक्षाके क्षेत्रमे काम करनेवाले अपने साथियो और मित्रोके सामने पहले-पहल सन् १९३७ मे रखा, तब अुन्होने कहा था कि मै अिस देशके सामने और अुसके द्वारा ससारके सामने कुछ नये विचार रखनेका दावा कर सकता हू। मैंने अब तक जिन विचारोकी भेट जगत्के चरणोमे रखी है, अुनमे यह विचार मुझे सबसे अधिक क्रान्तिकारी और अिसलिअे सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण लगता है। अिससे अधिक महत्त्वपूर्ण और अधिक मूल्यवान भेट मै दुनियाके सामने रख सकूगा, अैसा मुझे नही लगता। अिसमे मेरे सारे रचनात्मक कार्यक्रमको व्यावहारिक रूप देनेकी कुजी समाअी हुअी है। जिस नअी दुनियाके लिअे मै छटपटा रहा हू, वह अिसमे से अुत्पन्न की जा सकती है। यह मेरी आखिरी विरासत है। ये अक्षरश गाधीजीके शब्द नही है, परन्तु अुस समय जो शब्द अुन्होने कहे थे अुनका भावार्थ अिनमे आ जाता है।* अब हम यह देखे कि गांधीजीके शिक्षा-सम्बन्धी विचारोमे अैसी क्या नअी बात है कि सदा अत्यन्त सयमसे बोलनेवाले गांधीजी अिनके बारेमे अैसा बड़ा दावा करते है।

---

* अिस लेखमे आगे भी जहा यह लिखा है कि गाधीजीने फला बात कही, वहा अिसी प्रकार गाधीजीके अक्षरशः कहे हुअे शब्द नही, परन्तु अुनके कथनका भावार्थ ही है।

वर्धा-योजनाके मुख्य सिद्धान्त

जिसे शिक्षा अर्थात् पाठशालाकी शिक्षा कहा जाता है, अुसका लाभ अब तक दुनियाके आठ-दस प्रतिशतसे अधिक लोगोको मुश्किलसे ही मिला होगा। जो आगे बढे हुअे देश कहे जाते है, वहा शिक्षा-प्राप्त लोगोका प्रतिशत अधिक होगा। लेकिन पिछडे हुअे माने जानेवाले देशोमे, जिनकी आबादी बहुत बडी है, तो शिक्षितोका प्रतिशत आठ-दससे भी बहुत कम है। और आगे बढे हुअे देशोमे भी जिसे अुच्च शिक्षा कहा जाता है, अुसका लाभ बहुत थोडे प्रतिशतको मिल सकता है। अिग्लैण्ड और अमरीका जैसे देशोमे भी अुच्च शिक्षा सबको सुलभ नही होती। अमीरोके लडके या अुच्च शिक्षा प्राप्त करनेके लिअे छात्रवृत्ति प्राप्त करनेमें सौभाग्यशाली सिद्ध होनेवाले थोडेसे गरीब विद्यार्थी ही अुसे प्राप्त कर सकते है। सौभाग्य-शाली शब्द मै अिसलिअे काममे ले रहा हू कि सभी गरीब विद्यार्थियोको छात्रवृत्तिया नही मिलती। अमीरोके लडके तो योग्य हो या न हो, अुच्च शिक्षा प्राप्त करने जा सकते है। बडे साहित्यकार बननेकी, कलाकार बननेकी, वैज्ञानिक बननेकी, शिल्पी बननेकी या अिजीनियर बननेकी योग्यता जिनमे बीज रूपसे होती है, अैसे कितने ही बालकोकी शक्तिया अनुकूलताके अभावमे खिले बिना रह जाती होगी। गाधीजीने दुनियाके सामने शिक्षाकी जो योजना रखी है, अुसके अनुसार गरीबीके कारण किसी भी मनुष्यको अुच्चसे अुच्च शिक्षासे वचित नही रहना पडता। सन् १९३७ मे अुन्होने केवल सातसे चौदह वर्षके बच्चोके लिअे जिसे नअी तालीम या बुनियादी शिक्षा (बेसिक अेज्युकेशन) कहा जाता है, अुसीकी योजना पेश की थी। अुसमे मुख्य वस्तु यह थी कि बालकोकी शिक्षा अुनके आसपासकी कुदरती और सामाजिक स्थितिके अनुकूल किसी अुत्पादक अुद्योग द्वारा होनी चाहिये। अुद्योग अैसा चुनना चाहिये, जिसमे बालकको शिक्षा देनेकी अधिकसे अधिक सभावना हो। अुस अुद्योगसे सबध रखनेवाली तमाम छोटीसे छोटी बाते और क्रियाअे

शास्त्रीय पद्धति और कुशलतासे सिखाअी जाय और अुद्योग भी साव-धानी और कुशलतापूर्वक चलाया जाय, तो अुसके द्वारा विद्यार्थीको ठोस शिक्षा दी जा सकती है। अितना ही नही, सातो कक्षाओके विद्यार्थियोके कुल अुत्पादनकी रकम शिक्षकोके वेतनके बराबर हो सकती है, बशर्ते कि विद्यार्थियोका तैयार किया हुआ पक्का माल सरकार खरीद लेनेको तैयार हो। अैसा करनेमे अुनका हेतु शालाको खर्चके बारेमे स्वावलबी बनानेका था। स्वावलबनको अुन्होने अपनी योजनाकी खरी कसौटी (अेसिट टेस्ट) कहा है।

वर्धा-योजनासे पहले और पीछेकी तालीम

सन् १९४२ मे अुन्हे आगाखा महलमे नजरबन्द रखा गया। वहा अुन्हे अपनी अिस योजना पर खूब गहरा चिन्तन करनेका समय मिला। अुन्हे लगा कि मैने जो सातसे चौदह वर्षके बालकोकी शिक्षाकी योजना दी है वह काफी नही है। मनुष्यकी शिक्षा तो गर्भाधानसे आरभ होती है और अुसका देहान्त होने तक जारी रहती है। अिसलिअे आगाखा महलसे बाहर आनेके बाद अुन्होने सात वर्षसे कमके बालकोके लिअे पूर्व-बुनियादी शिक्षा, चौदह वर्षसे अूपरकी अुम्रवालोके लिअे अुत्तर-बुनियादी शिक्षा और विद्यार्थी अवस्थाकी अुम्रको पार कर चुकनेवाले बडी अुम्रके स्त्री-पुरुषोके लिअे प्रौढ-शिक्षाकी योजनाअे पेश की। और अुनकी तफसील निश्चित करनेका काम अुन्होने अिस प्रकारकी शिक्षाको अमलमे लानेके लिअे स्थापित हिन्दुस्तानी तालीमी सघको सौपा। शिक्षाके अिन सब क्रमोमे अलग-अलग ढगसे स्वावलबनके तत्त्व पर जोर दिया गया था। अुदाहरणार्थ, बुनियादी शिक्षाके सम्बन्धमे अुन्होने कहा कि विद्यार्थियोका अुत्पादन शिक्षकोके वेतनके बराबर होना चाहिये, जब कि अुत्तर-बुनियादी शिक्षामे अिस बात पर जोर दिया कि विद्यार्थी अपने भोजन-वस्त्रके लायक अुत्पन्न करके ही शिक्षा प्राप्त करे। अिस प्रकार विद्यार्थी चाहे जितने वर्ष पढे, परन्तु अुसके माता-पिता या समाज पर अुसके निर्वाहका भार

नही पडेगा। अिसी तरह प्रौढ-शिक्षाको भी प्रौढ अपनी आजीविकाके लिअे जो धधा करता हो अुसके आसपास अिस ढगसे गूथना चाहिये कि वह न केवल अपना जीवन अच्छी तरह बिताना सीखे, वल्कि जो धधा करता हो अुसमे भी अुसकी कुशलता बढे और धधेमे भरसक सुधार करके वह अपना अुत्पादन बढा सके।

सर्वांगीण विकास

यह तो अिस शिक्षा-योजनाका आर्थिक पहलू हुआ। अिस योजनाका विशेष दावा तो यह है कि अुत्पादक अुद्योगके साथ ही सारी शिक्षाको गूथ देनेसे, अुत्पादक अुद्योगको शिक्षाका माध्यम बनानेसे, बालकका सर्वागीण विकास किया जा सकेगा और बालक समाजका अधिक अुपयोगी अग बन सकेगा। अिस समय अधिकतर किताबी शिक्षा दी जाती है। जिनमे लिखने-पढनेका काम मुख्य हो अैसे मुशीगिरी या कारकुनीके कामके नये धधे अिस जमानेमें बहुत चल गये है। अुनमे आजकलके पढे-लिखे लोग काम देते है। हमारे देशमे तो धधेकी शिक्षा देनेवाली शालाओ और विद्यालयोमें पढे हुअे विद्यार्थी भी वह धधा स्वतत्र रूपसे नही करते अथवा नही कर सकते। अुनमे से अधिकाश अुस धधेसे सम्बन्धित कारकुनीका काम करते है। व्यापारिक कॉलेजोसे हर साल सैकडो ग्रेज्युअेट निकलते होगे। अुनमे से बडे तो क्या परन्तु छोटे व्यापारी भी बहुत कम लोग होते है। अधिकाश व्यापारिक ग्रेज्युअेट व्यापारिक पेढियो या कपनियोमे कारकुनीका काम ही करते पाये जाते है। यही हाल विज्ञान और खेतीके ग्रेज्युअेटोका है। वे अपने-अपने धधोका पुस्तकीय ज्ञान प्राप्त करते है, परन्तु अुन धधोको चलानेके लिअे आवश्यक प्रत्यक्ष और व्यावहारिक कामोमे वे कच्चे साबित होते है। अिसलिअे अुनके जीवन अुन धधोके सम्बन्धमे भी परोपजीवी रहते है। अुनके जीवनका भार अुन धधोके मेहनत-मजदूरी करनेवाले वर्ग पर पडता है। अुन्हे जितना वेतन मिलता है, अुसकी तुलनामें अुन धधोंके सामूहिक अुत्पादनमे अुनका हाथ बहुत थोडा होता है।

गाधीजीकी यह योजना अैसी है जिसमे मनुष्यकी कर्मेन्द्रियो और ज्ञानेन्द्रियोका समान विकास होनेके साथ अुसकी बुद्धि और सूझबूझका भी विकास होता है। वह जो भी ज्ञान प्राप्त करता है, वह निश्चित होता है और अुसे व्यवहारमे लानेकी कुशलता अुसमे होती है।

श्रमकी महिमा

शिक्षाकी अिस योजनामे शरीरश्रम, स्वाश्रय, दूसरोके साथ मिलजुल कर काम करनेकी वृत्ति, व्यवस्था शक्ति आदि गुणोका बालकमे छुटपनसे ही विकास होता है। किसी भी प्रकारका अुपयोगी काम करनेमे अुसे अरुचि नही होती, घृणा नही आती या हीनता अनुभव नही होती। आजकल समाजमे पाये जानेवाले अूचनीचके भेदभावमे तथा दूसरोकी मेहनतसे लाभ अुठानेकी वृत्तिमे मूल कारण शरीरश्रमकी अरुचि ही है। अिस योजनामे बालककी शरीरश्रम करने तथा सबको समान माननेकी स्वाभाविक वृत्तियोको अुचित पोषण दिया जाता है।

आजकल दुनियामे जिस प्रकारकी शिक्षा प्रचलित है, वह व्यवहारमे और परिणाममे आर्थिक और सामाजिक असमानता अुत्पन्न करनेवाली, मेहनत-मजदूरी करनेवाले वर्गका शोषण करनेवाली और अिसलिअे रक्तपात और युद्धोको पोषण देनेवाली साबित हुअी है। जब कि बुनियादी शिक्षा अिन चीजोकी जड पर आघात करनेवाली है, अहिसक समाज-रचनाको नजदीक लानेवाली है।

२

संक्षिप्त अितिहास

सन् १९३७ मे जब देशके अधिकतर प्रान्तोमे काग्रेसी मत्रि-मडल बने तब गाधीजीने अुन्हे आग्रहपूर्वक कहना शुरू किया कि शराबबन्दीके कार्यक्रम पर हमें कितना ही अधिक नुकसान अुठाकर भी अमल करना चाहिये। मत्रीगण अिस विचारके अनुकूल ही थे। अुनके सामने मुख्य कठिनाअी पैसेकी थी। शराबकी आय छोड दी जाय तो सरकारके मौजूदा खर्चको पूरा करनेके लिअे दूसरे कर लगाने चाहिये

अथवा सरकारको मौजूदा खर्चमे कमी करनी चाहिये। गाधीजीने सोचा कि शिक्षाका सारा स्वरूप ही बदल दिया जाय तो शिक्षामे भी महत्त्वपूर्ण सुधार किये जा सकते है और अुसका खर्च भी घटाया जा सकता है। अिस प्रकार शराबबन्दी अिस योजनाका निमित्त बनी, परन्तु गाधीजीके दिमागमे तो और कअी कारणोसे यह योजना पक रही थी। गाधीजी दक्षिण अफ्रीकामे थे तब अुन्होने देखा था कि भारतीय बालकोको वहाकी सार्वजनिक शालाओमे भरती नही किया जाता। वे शालाअे खासकर युरोपियनोके लिअे ही चलाअी जाती थी। गाधीजीके बच्चोको अपवादके रूपमे अैसी किसी भी शालामे प्रवेश मिल सकता था। परन्तु समाजके दूसरे बालकोको जो लाभ नही मिलता था, अुसे अपने बच्चोके लिअे लेना गाधीजीको ठीक नही लगा। अिसलिअे अुन्होने घर पर और अधिकतर स्वय ही बच्चोको पढाना शुरू किया। बादमे अुन्होने फिनिक्स आश्रम स्थापित किया और वहा सादा और शरीर-श्रमवाला जीवन व्यतीत करने लगे। फिनिक्स आश्रममे अुनके बच्चोके अलावा साथियोके बच्चे भी थे। अुन सबकी शिक्षाका कोअी निश्चित प्रबध करनेकी जरूरत पैदा हुअी। अिस नये जीवनके अनुरूप शिक्षा देनी हो तो अुसमे शरीर-श्रम और अुद्योगका स्थान होना चाहिये, यह सिद्धान्त तय हुआ और साक्षरी विषयो*के अलावा अुद्योग सिखाना आरभ किया गया। परतु सत्याग्रहकी लडा-अिया और दूसरे कअी विक्षेप वहा आये, अिसलिअे गाधीजी शिक्षाके

---

* 'अेकेडेमिक सब्जेक्ट्स'के लिअे 'साक्षरी विषय' शब्द मैने बनाया है। आजकल अुनके लिअे 'बौद्धिक विषय' शब्द काममे लिया जाता है। परतु वह ठीक नही है। अुसमे यह गलत मान्यता है कि किताबी ज्ञानवाले विषय ही बौद्धिक होते है और अुद्योगका तथा जीवनके लिअे अुपयोगी अन्य प्रवृत्तियोका बुद्धिके साथ कोअी सबध नही होता! अुलटे, अुद्योगमे और दूसरी प्रवृत्तियोमे बुद्धिका ज्यादा विकास होता है। किताबी विषयोमे तो रटाअीकी तरफ चले जानेका भय रहता है।

प्रश्नमे अधिक बारीकीसे नही अुतर सके। हिन्दुस्तानमे आनेके बाद साबरमती आश्रममे गाधीजीने अपने शिक्षाके प्रयोग अधिक व्यवस्थित रूपमे और बडे पैमाने पर आरभ किये। अुनमे हम सब शरीक हुअे। गाधीजी स्वय भी अुनमे अच्छी तरह भाग लेनेकी अिच्छा रखते थे। परतु अुन पर अेकके बाद अेक अैसे काम आते गये कि प्रत्यक्ष शिक्षणका काम वे कर ही न सके। हमे भी अुन्होने जितनी आशा रखी थी अुतना समय वे नही दे सके। प्रवाससे आश्रममे आते तब हमारे और विद्यार्थियोके साथ चर्चा करते। क्या चल रहा है, यह जान लेते और कोअी सूचनाअे देने लायक होती तो दे देते। परन्तु अुद्योगकी कक्षाअे अलग और साक्षरी विषयोंकी कक्षाअे अलग, अिन दोनोके बीच कोअी मेल या सबंध नही — शिक्षाका यही प्रकार चलता था। अुद्योग-शिक्षणका काम आश्रमके कुछ भाअी श्री मगनलालभाअी गाधीकी देखरेखमे करते थे। साक्षरी विषयोकी कक्षाअे हम शिक्षक कहलानेवाले लोग चलाते थे। परतु अुद्योगके साथ साक्षरी विषयोका अनुबध करनेकी बात हममे से किसीको नही सूझी थी। शालाको शुरू हुअे अेक वर्ष भी पूरा नही हुआ कि गाधीजीको लगा कि शालाके शिक्षकोको जब तक अुद्योग नही आता, तब तक वे राष्ट्रीय शिक्षक नही कहलायेगे। अिसलिअे अुन्होने तय किया कि हम नये विद्यार्थी न ले और कमसे कम चार घटे अुद्योग सीखनेमे दे। अिस प्रकार शालाका काम रोक कर हमने अुद्योग सीखना शुरू किया, तब भी यह स्पष्टता नही हुअी थी कि अुद्योग-शिक्षक भी हमीको बनना है और साक्षरी विषयो तथा अुद्योगके बीच कोअी सबध जोडना है। हममे से तो किसीको यह विचार ही नही सूझा था। गाधीजीके मनमे भी यह विचार बहुत अस्पष्ट दशामे रहा होगा। हा, हममे अेक बात बहुत बार होती थी कि हम अुद्योग अिसीलिअे अनिवार्य रूपमे सिखाते है कि आज जो शिक्षित माने जाते है अुन्हे कारीगरीका कोअी काम करना नही आता और जो कारीगर है अुनमे साक्षरी शिक्षाके सस्कार नही

होते। राष्ट्रीय शिक्षामे साक्षरी विषयोके साथ अुद्योगकी शिक्षाको रखनेसे दोनो वर्गोंमे जो न्यूनता है वह पूरी हो जायगी। परतु हमे यह कल्पना नही थी कि हमारे विद्यार्थियोमे से कोअी अुद्योग सीखकर किसान या जुलाहा बन जायगा। अुस समयके विद्यार्थियो या शिक्षकोमे से कोअी किसान या जुलाहा बना भी नही था। आज विचार करने पर अैसा लगता है कि हम शिक्षक और विद्यार्थी अुद्योग क्या सीखते थे अेक खेल ही करते थे। हम शिक्षक तर्कसे अपने मनको मनाते थे कि यह अुपयोगी काम है, अिससे हमारा जीवन-निर्माण होता है और कारीगर तथा मजदूर-वर्गके साथ हमारा सबध बधता है। परतु अधिकाश विद्यार्थियोका तो यह निश्चित मत था कि अुनके समयका बिगाड ही हो रहा है; शिक्षक तो साक्षरी विषयोमे निपुणता प्राप्त कर चुके हैं, परतु हमारा समय अुद्योगोमे चला जाता है, अिसलिअे साक्षरी विषयोमे हम प्रगति नही कर सकते। अन्तमे अुन्होने हमारे विरुद्ध विद्रोह किया और हमे छोडकर विश्वविद्यालयकी शिक्षा लेने चले गये। ये विद्यार्थी गाधीजीके अति निकट सबधमे रहे हुअे थे। अुन्होने विशेष रूपसे गाधीजीका प्रेम सपादन किया था। अुनके विषयमे गाधीजीने बडी बडी आशाअे बाधी थी। अिन विद्यार्थियोने विश्व-विद्यालयकी शिक्षा लेनेके लिअे आश्रम छोडनेकी अनुमति मागी, तब गाधीजीने खुशीसे अनुमति तो दे दी, परतु अुनके हृदयको सख्त चोट भी लगी। अुन्हे प्रतीति हो गअी कि अुनके प्रयोगमे कोअी न कोअी बडी त्रुटि है और अुस त्रुटिकी वे खोज करने लगे। अुन्हे अैसा दिखाअी देने लगा कि विद्यार्थियोकी अुद्योगमे दिलचस्पी न होनेका कारण यह था कि अुद्योग ज्ञानपूर्वक नही सिखाया जा रहा था। अुद्योगका दूसरी शिक्षाके साथ या विद्यार्थियोके जीवनके साथ कोअी संबंध नही जोडा जा सका था। जीवन-विकासके अेक मुख्य साधनके रूपमें हमने अुद्योगका अुपयोग नही किया था। हम शिक्षकोको अैसा करना आया ही नही था। और अिसलिअे अुद्योगको प्रामाणिक जीवनका

आधार मानने और अुसमे अेक प्रकारकी जीवनकी सार्थकता अथवा धन्यता अनुभव करनेकी बात विद्यार्थी समझ ही नही सके। विचारोका यह मथन गाधीजीके हृदयमे चल ही रहा था कि अितनेमे अिस प्रश्न पर अुन्हे विचार करना पडा कि शराबबन्दी करनी हो तो पैसेकी कठिनाअी कैसे दूर की जाय। अुसमे से अुन्हे यह नअी योजना सूझी। अुन्होने तत्कालीन प्रान्तीय सरकारोके सामने यह बात रखी कि विद्यार्थियोके आसपासकी परिस्थितिके अनुकूल अुत्पादक अुद्योग द्वारा अुनकी सारी शिक्षा हो तो शिक्षा अधिक ठोस हो सकती है और विद्यार्थियोके अुत्पादनसे शालाको स्वावलबी भी बनाया जा सकता है। प्रश्न तो अितना ही था कि शराबबन्दीके कारण जो आय छोडनी पड रही है, अुसे किस तरह पूरा किया जाय। परतु गाधीजीने केवल अितना ही विचार नही किया। अुनकी विचार करनेकी पद्धति किसी भी प्रश्नको समग्र दृष्टिसे जाचनेकी थी। अिसलिअे वे तो अिस विचारमे पड गये कि सारे देशके सातसे चौदह वर्षके बालकोके लिअे अुचित शिक्षा कैसी हो और वह सबके लिअे कैसे सुलभ बनाअी जाय? अिस अुम्रके सारे बालकोको शिक्षा देनी हो तो सरकारको कितनी ही नही शालाअे खोलनी पडेगी। जितनी शालाअे आज है अुन्हीको चलानेके लिअे जब सरकारको पैसेकी कठिनाअी होती है, तब नअी शालाअे कैसे खोली जा सकती है? शालाअे चलानेमे मुख्य खर्च शिक्षकोके वेतनका होता है। अुसे मिटानेके लिअे अुन्होने कहा कि सातो कक्षाओके विद्यार्थियोके अुद्योगके कुल अुत्पादनसे शालाके तमाम शिक्षकोके वेतनके लायक आय होनी चाहिये।

बच्चोंका शोषण?

अिसके विरुद्ध मित्रोने यह आपत्ति अुठाअी कि अगर आप स्वावलबनका आग्रह रखेगे तो शिक्षक बालकोसे अुनके बूतेके बाहर और अुनकी मरजीके खिलाफ श्रम करायेगे। अिससे तो बालकोके शोषणका बडा प्रश्न खडा हो जायगा।

अिसके अुत्तरमे गाधीजीने बताया कि स्वावलबनको आवश्यक माननेमे मेरी दृष्टि शुद्ध शिक्षाकी ही है। अुद्योग द्वारा शिक्षा देनेकी पद्धतिको आप शिक्षाकी अुत्तम पद्धतिके रूपमे स्वीकार करते हो, तो वह तभी अुत्तम हो सकती है और अुसके द्वारा बालकोको ठोस शिक्षा तभी मिल सकती है, जब बालक सच्चा अुद्योग करे, अुद्योगके साथ खिलवाड न करे, अुद्योगमे अपना समय न बिगाडे और अुद्योगमे जो कच्चा माल और औजार काममे लिये जाते हो अुनका पूरी सावधानीसे अुपयोग करना जाने। समय, माल या औजारोका बिगाड होता हो तब तो यह माना जायगा कि हम बच्चोको गलत शिक्षा देते है। हम अुनका नुकसान करते है। हमारा दावा तो यह है कि अुद्योग द्वारा शिक्षा देनेसे बालककी कर्मेन्द्रियो और ज्ञानेन्द्रियोके सच्चे विकासके साथ अुसकी बुद्धि और हृदयका विकास भी अधिक अच्छी तरह किया जा सकता है। यह दावा तभी सच्चा साबित होगा जब बालकको अपने शरीर और मन दोनोकी सारी शक्ति लगाकर काम करनेकी आदत पडे, अपने काममे आनेवाले औजारोको अच्छी तरह रखना आवे और वह किसी तरहका बिगाड न करना सीखे। स्वाभाविक रूपमे जिस बालकका पालन-पोषण हुआ हो, अुसे खुद काम करना पसन्द होता ही है। दूसरेसे सुनकर ज्ञान प्राप्त करनेकी अपेक्षा स्वय निरीक्षण करके और स्वय प्रयोग करके ज्ञान प्राप्त करना अुसे अधिक रुचिकर लगता है। शिक्षक स्वय अुद्योगमे कुशल होगा, अुद्योगकी सारी क्रियाअे कारण देकर समझाना अुसे आता होगा और अुद्योगमे बालककी दिलचस्पी पैदा करनेकी कला अुसमे होगी, तो बालक बडे शौकसे अुद्योग करेगा। यह तो हम अनुभवसे प्रत्यक्ष देख सकेगे कि अुसीसे अुसे अधिक अच्छी शिक्षा मिलती है। अिसमे बालकसे जबरन मेहनत करानेका प्रश्न ही पैदा नही होता। बालककी शक्तिके अनुसार अुत्पादन न हो तब तो अुलटा ही परिणाम आयेगा। बालकको संतोष नही होगा और अुसमे निराशाकी भावना पैदा होगी।

यह माननेकी जरूरत नही कि अिन दलीलोंसे भी सब मित्रोको सतोष हुआ होगा, क्योकि आज भी अुनमे से कुछ स्वावलबनके बारेमे अुत्साह नही रखते। हा, अुन्हे भी अितना विश्वास तो अवश्य हो गया है कि शिक्षाकी दृष्टिसे अुद्योग चलाना हो तो अुसमे जरा भी बिगाड नही होना चाहिये। वैसे, अभी तक तो बहुतसे शिक्षक यही मानते थे कि शालामे शिक्षाकी दृष्टिसे अुद्योग चलाना हो तो बिगाड होता ही है। शाला कोअी कारखाना नहीं है कि वहा अुत्पादन और आयका हिसाब लगाया जाय।

'प्रोजेक्ट मेथड' से भेद

दूसरी बात शिक्षाशास्त्री मित्रोने गाधीजीको यह कही कि अुद्योग द्वारा शिक्षा देनेकी आप जो बात करते है वह कोअी नयी नही है। शिक्षाके क्षेत्रमे नयेसे नया विचार यह है कि बालकोको केवल पुस्तको द्वारा अथवा श्रवण, वाचन तथा लेखन द्वारा शिक्षा देनेकी पद्धति बडी दोषपूर्ण है। हेतुपूर्वक नियोजित किसी प्रवृत्ति द्वारा शिक्षा देनेकी पद्धति ही अुत्तम है। यह कहकर अुन्होने 'प्रोजेक्ट मेथड' की,*

* किसी वस्तुकी जानकारी देनी हो तो मुहसे अुसका वर्णन करनेके बजाय अुससे सबध रखनेवाली सारी क्रियाअे और सारा व्यवहार बालकोसे योजनापूर्वक कराकर अुस वस्तुका ज्ञान देनेकी पद्धति। अुदाहरणार्थ, हमे अपने लिखे हुअे पत्रादि जिन्हे भेजने हो अुन लोगो तक डाक-विभाग किस प्रकार पहुचाता है अिसका वर्णन करनेके बजाय डाक-विभागके सारे व्यवहारकी व्यवस्था शालामे कृत्रिम ढगसे करके अुसके सारे काम बालकोसे कराये जाय। कोअी बालक पोस्ट मास्टर बने, कोअी डाकिया बने और कोअी पत्रोको गाववार छाटनेवाला 'सॉर्टर' बने। शालामे कुछ डाकघर बनाये जाय। बालक अेक-दूसरेको पत्र लिखकर जो डाकघर अपने गावका माना जाता हो अुसके डब्बेमे डाल आये। डाकिया बना हुआ लडका अुसमे से पत्र निकालकर अुस पर मुहर लगावे और दूसरे गाव पहुचानेके लिअे नजदीकके स्टेशन

जो नअीसे नअी शिक्षा-पद्धति मानी जाती है, बात की और यह बताया कि आपकी शिक्षा-योजना वैसी ही है। गाधीजीने कहा कि 'प्रोजेक्ट मेथड' क्या है, सो मै नही जानता। मैने अपने विचार अिस विषयकी कोअी पुस्तके पढकर नही लिये है। यह योजना स्वतत्र रूपमे विचार करके निकाली हुअी है। परतु आप अिस पद्धतिका जो वर्णन कर रहे है अुससे मुझे लगता है कि मेरी योजना अुससे बिलकुल भिन्न है। अिस पद्धतिमे तो जिस विषय या वस्तुकी शिक्षा देनी है अुससे सबधित अुसकी योजना अथवा प्रवृत्ति कृत्रिम रूपमे पैदा की जाती है। वह अैसी सच्ची प्रवृत्ति या सच्ची वस्तु नही होती, जो मनुष्यके अुपयोगमे आये। अुस पर किया गया खर्च और बालको द्वारा किया गया श्रम समाजमे किसीके काममे नही आता। यह हो सकता है कि अिस पद्धतिसे वस्तु अथवा विषयका ज्ञान बालकको अच्छी तरहसे कराया जा सके। परतु अिस पद्धतिमे शिक्षा अितनी खर्चीली बन जायेगी कि अुसका लाभ थोडेसे धनिक वर्गके बालक ही अुठा सकेगे। मुझे तो अुत्तम शिक्षा गरीबसे गरीब वर्गके बालकोके लिअे भी सुलभ कर देनी है। अिसीलिअे स्वावलबनको मै अपनी योजनाकी सच्ची कसौटी कहता हू। जिन अुद्योगो द्वारा शिक्षा देनेके लिअे मै कहता हू वे केवल बालकोके मनोरजन, खेल, या शिक्षाके लिअे नियोजित कृत्रिम अुद्योग अथवा प्रवृत्तिया नही है, परतु देशके लाखो अथवा करोडो लोगोके जीवन-निर्वाहके साधन बन सकनेवाले सच्चे अुद्योग है।

अिस प्रकार गाधीजीने अपनी योजना मित्रो तथा शिक्षा-विभागके मत्रियो और अधिकारियोके सामने रखी। फिर अुसे व्यवस्थित रूप

पर दे आये। वहासे वे कृत्रिम ढगसे बनाअी हुअी रेल्वेके डाकके डब्बेमे जाय। वहा सॉर्टर अुन्हे गाववार छाटे और प्रत्येक गावके पत्रोके थैले अुन गावोके नजदीकके स्टेशन आने पर वहा दे दे, अित्यादि।

देने तथा अुसका पाठ्यक्रम तैयार करनेके लिअे अेक कमेटी नियुक्त की गअी। कमेटीने सुझाया कि अुत्पादक अुद्योगके अलावा जिस कुदरत और समाजके बीच बालक रहता है, अुसे भी शिक्षाका माध्यम अथवा केन्द्र बनाया जाय। अुद्योगका चुनाव करनेमे आसपासकी कुदरत और समाजकी परिस्थितिका विचार तो करना ही पडेगा, अिसलिअे अुनका परिचय भी आवश्यक है। शिक्षाका मुख्य माध्यम अुत्पादक अुद्योग हो और आसपासकी कुदरत और समाज अुप-माध्यम बने। स्वावलबनके सबधमे कमेटीने यह आशा व्यक्त की कि शिक्षकोके वेतनके लायक खर्च बालकोके अुद्योगसे धीरे धीरे निकल सकेगा।

३

स्वावलंबनका प्रश्न

हमारे अलग अलग प्रान्तो, जिन्हे अब राज्य कहा जाता है, की सरकारोने गाधीजीकी योजनाके अनुसार प्रयोग शुरू किये। थोडे ही समयमे अुनकी समझमें आ गया अथवा पहलेसे यह समझ कर ही अुन्होने प्रयोग शुरू किये होगे कि हम स्वावलबनके ध्येय तक नही पहुच सकेगे। अुनको शायद यह भी लगा होगा कि शुद्ध शिक्षाकी दृष्टिसे विचार किया जाय तो गाधीजी स्वावलम्बनको जो महत्त्व देते है वह देनेकी जरूरत नही। गाधीजीकी योजनामे अच्छी शिक्षाके जो दूसरे तत्त्व है, जैसे साक्षरी विषयोका बालकोकी अलग अलग प्रवृत्तियोके साथ अनुबध करना वगैरा, वे अुन्होने स्वीकार किये और अुन पर अमल करनेका प्रयत्न किया। व्यक्तिगत और सामूहिक सफाअी सबधी प्रवृत्तिया की जाय; राष्ट्रीय, धार्मिक और ऋतुओके अुत्सव मनाये जाय; जिन घटनाओसे मनोरजनके साथ शिक्षा मिलनेकी सभावना हो अुन्हे बालकोके नाटचप्रयोगोमे बताया जाय; छोटे छोटे पर्यटनोकी व्यवस्था की जाय, शाला-सबधी तमाम कामकाजकी व्यवस्था बालकोको सौप कर अुन्हे स्वराज्यकी तालीम दी जाय; बच्चोसे हस्तलिखित

पत्र निकलवाये जाय —— अिस प्रकारकी प्रवृत्तियोको अुन्होने बालकोकी शिक्षाके महत्त्वपूर्ण अग मानना स्वीकार किया। अिसके साथ साथ थोडा समय बालक अुत्पादक अुद्योगमे दे, अिसे भी अुन्होने आवश्यक समझा। और अुद्योग तथा अन्य प्रवृत्तियोका अनुबध करके साक्षरी विषय सिखाना शुरू किया। परतु अुद्योग द्वारा शालाको स्वावलबी बनानेका विचार अुन्हे असभव जान पडा। परिणाम यह हुआ कि अुद्योग और दूसरी प्रवृत्तिया जारी करनेके कारण अिन नअी शालाओका खर्च कम होनेके बजाय पुरानी पद्धतिकी पाठशालाओसे अुल्टा बढ गया। अुद्योग कुशलतापूर्वक न चला सकनेके कारण अुसमे जो बिगाड होता है वह अभी तक रोका नही जा सका है। अैसी आलोचनाअे भी होने लगी है कि यह तो जनताके धनका अपव्यय हो रहा है और बालकोकी साक्षरी शिक्षाका स्तर गिरता जा रहा है। अैसी आलो-चनाओके अुत्तरमे बम्बअी सरकारने हालमे अेक वक्तव्य प्रकाशित किया है। अुसमे शिक्षाकी दृष्टिसे अिस प्रयोगके क्या क्या अच्छे परिणाम हुअे हैं, यह बताकर कहा गया है कि अब तकके अनुभवसे अैसा लगता है कि अुद्योगके सिलसिलेमे जो अतिरिक्त चालू खर्च होता है अुतना तो अुद्योगसे निकालना सभव है। कुछ शालाओमे बालकोके वस्त्रस्वावलबी मडल बने है, यह हकीकत भी अुसमे बताअी गअी है।

साक्षरी विषयोंके बारेमे असंतोष

अुद्योग अच्छी तरह चला सकनेके लिअे तमाम शिक्षकोको अुनकी दूसरी तालीमके साथ अुद्योगका विषय सिखानेकी सरकारने योजना बनाअी है। और जैसे जैसे शिक्षक तैयार होते जायगे, वैसे वैसे तमाम प्रारभिक शालाओमे अुद्योग और अनुबद्ध शिक्षा जारी कर दी जायगी। परतु अिस नीति पर अमल करनेके साथ शिक्षा-विभागके अधिकारियोके मनमे यह चिन्ता बनी ही रही है कि साक्षरी विषयोके ज्ञानका स्तर जरा भी गिरना न चाहिये। नयी पद्धतिमे

साक्षरी विषयोके पुराने ढगके ज्ञानकी अपेक्षा रखी जाय तो अुसे पहले जितनी मात्रामे देना कठिन है। क्योकि जितना समय दूसरी प्रवृत्तियोमे जायगा अुतना साक्षरी विषयोका काम कम हो जाना स्वाभाविक है। यह बात सच है कि प्रवृत्तियोके साथ अनुबध साध कर सिखानेकी पद्धतिसे साक्षरी विषयोका ज्ञान अधिक अच्छी तरह दिया जा सकता है, परतु वाचन-लेखन द्वारा ही मिल सकनेवाले और जिसके लिअे रटाअीका भी आसरा लेना पडे अैसे ज्ञानकी अपेक्षा पाठ्यक्रमो और परीक्षाओमे रखी जाय तो अुसके लिअे थोडा ही समय मिलेगा। अिसका सही अुपाय तो यह है कि पाठ्यक्रममे जडमूलसे परिवर्तन करने चाहिये और परीक्षाओका स्वरूप भी जडसे ही बदलना चाहिये। परतु अभी तक अैसा किया नही जा सका। अैसे बुनियादी परिवर्तन करनेका या तो साहस नही हुआ या वे परिवर्तन करनेकी जरूरत ही महसूस नही हुअी। अिसके लिअे सरकारी अधिकारियोके साथ गैर-सरकारी कार्यकर्ता भी जिम्मेदार है, क्योकि अिस प्रयोगके सबधमें सरकारको सलाह देनेके लिअे अुसके द्वारा नियुक्त 'बेसिक अेज्युकेशन बोर्ड' मे सरकारी सदस्योमे गैर-सरकारी सदस्योकी सख्या अधिक है। अिस स्थितिके लिअे मै अपनेको भी जिम्मेदार मानता हू, क्योकि अढाअी वर्ष पहले बीमार होकर अपग जैसा बन जानेसे पहले मै अिस बोर्डका अध्यक्ष था। अिस बोर्डकी सलाहकी सरकारने अुपेक्षा की हो, अैसी अेक भी घटना मुझे याद नही।

शालाओंकी अुद्योग-संबंधी त्रुटियां

सरकारी विज्ञप्तिमे जितना कहा गया है अुतना भी अभी तक तो अच्छी तरह अमलमे नही लाया जा सका है। जिन प्रवृत्तियोकी बात अूपर बताअी गअी है, वे सब शालाओमे अच्छी तरह होती नही देखी जाती और अुद्योगके सिलसिलेमे होनेवाला खर्च अुद्योगसे मिल जानेकी जो आशा प्रगट की गअी है वह भी शायद ही कही पूरी हुअी है। अभी तक कच्चे माल और साधनोंका

बिगाड होना रोका नही जा सका है।* कुछ शालाओका प्रबध सरकारने गैर-सरकारी कार्यकर्ताओको सौप दिया है। अुसमे भी अुद्योगके मामलेमे जैसी चाहिये वैसी प्रगति अभी तक शायद ही कोअी शाला दिखा सकी है। मैने सुना है कि अकेली कराडीकी बुनियादी शालामे स्वावलबी दृष्टिसे आशाजनक परिणाम आये है। अिसका मुख्य कारण यह है कि अुस गावकी आबादी कुशल कारीगर लोगोकी है, वे सन् १९२१ से खादीके बारेमे कुछ न कुछ परिश्रम करते आये है, वहाके शिक्षक अुत्साही है और अुन्हे लोगोका अच्छा सहयोग मिलता है। परतु दूसरी शालाओमे जैसे चाहिये वैसे परिणाम दिखाअी नही देते। अिसके कअी कारण है। सबसे बडा कारण तो यह है कि शिक्षकोको स्वय अभी तक अुद्योग अच्छी तरह नही आता। अुन्हे अधकचरा अुद्योग सिखाकर अुनके द्वारा शालामे अुद्योग जारी करनेकी हम अुतावली करते है। ट्रेनिंग कॉलेजके, जहा अिस योजनाके अनुसार शिक्षणकी खास तालीम देनेका दावा किया जाता है, अध्यापक वहा चलनेवाले अुद्योगोमे से कमसे कम अेक अुद्योगमे तो अच्छे निष्णात होने ही चाहिये। तो ही अुद्योगकी विविध क्रियाओमे बालकोकी कर्मेन्द्रियो तथा ज्ञानेन्द्रियोके विकासकी कितनी सभावना है तथा अुनके साथ साक्षरी विषयोकी कौन कौनसी और कितनी जानकारीका अनुबध हो सकता है, यह वे अपने अनुभवसे जान सकते और सिखा सकते है। साथ ही अुन्हे आसपासकी कुदरत और समाजका केवल पुस्तकोसे प्राप्त किया हुआ ज्ञान नही, परतु प्रत्यक्ष ज्ञान होना चाहिये। यह भी सभव है कि कुछ अध्यापकोको अिस प्रयोग पर श्रद्धा ही न हो। ये सब न्यूनताअे तालीम देनेवाले अध्यापकोमे काफी मात्रामे होगी। अिन न्यूनताओको वे पुस्तकोसे प्राप्त शिक्षा द्वारा और तर्क दौडाकर किये गये अनुमानो द्वारा ही पूरी कर लेनेका प्रयत्न करते

---

* यह वर्णन बम्बअी राज्यकी शालाओका और अुनमे भी गुजरातकी शालाओका है।

होगे। परतु अिसमे आनद नही आता। हमारा सब काम छिछला ही रहता है। जिनके सिर पर सारी योजनाका ब्योरा तय करके देने, योजनाको अमलमे लानेवाले शिक्षकोको तालीम देने और अुन्हे रास्ता बतानेकी जिम्मेदारी है, अुन्हीकी अैसी स्थिति हो तो अिसका अर्थ यह हुआ कि अिस योजनामे अुद्योगको शिक्षाका अेक महत्त्वपूर्ण साधन मानते हुअे भी अुसकी पूरी साधना किये बिना अिस योजनाको अमलमे लानेकी जिम्मेदारी हमने अुठाअी है। यह बात वैसी ही है जैसे कोअी ककहरा और बारहखडी आये बिना भाषा सिखाने लगे अथवा अिस बातकी तालीम देने लगे कि भाषाकी शिक्षा कैसे दी जाय। ट्रेनिग कॉलेजोमे अुद्योग सिखलानेके लिअे हम अलग अुद्योग-शिक्षक रखते है। यह अुद्योग-शिक्षक शिक्षाकी दृष्टिसे अुद्योगका महत्त्व नही समझता। अनुबधकी पद्धतिकी अुसे कोअी कल्पना नही होती। अुसे अिस प्रकारके शिक्षाशास्त्रका ज्ञान होना चाहिये, यह आवश्यक नही माना जाता। अिस अुद्योग-शिक्षकके वेतनका ग्रेड और विभागमे अुसका दरजा साक्षरी विषयोके शिक्षकोकी अपेक्षा घटिया होता है। जो शिक्षाशास्त्री माने जाते है अुनका यह खयाल है कि भले ही अुद्योगमे हम निपुण न हो, लेकिन अुद्योगके सचालनके सिद्धान्त तो हम समझते है। अिसलिअे अुसके साथ हम दूसरे विषयोका अनुबध कर सकते है और अुसे करनेकी पद्धति सिखा भी सकते है। यह स्थिति बुनियादी शालाके शिक्षकोके भी शिक्षकोको, जो ग्रेज्युअेट होते है, तालीम देनेके लिअे खुले हुअे कॉलेजोके अध्यापकोकी तथा बुनियादी शालाके अध्यापकोको तालीम देनेवाले अध्यापकोकी है। अुद्योग-निरीक्षको (क्राफ्ट सुपरवाअिजरो)की भी कमोवेश यही हालत होती है।

अधिक कठिनाअी तो शालाके शिक्षकोके मानसकी है। अुन्हें अनेक कारणोसे अपनी नौकरीके बारेमे बडा असतोष है। **शिक्षकोंकी कमियां** अिसलिअे अुनमे अिस कामके लिअे अुत्साह या रस नही पाया जाता। अुनकी जानकारी और योग्यता

भी बहुत कम होती है। शिक्षककी नौकरीमे भरती होनेके लिअे प्राथमिक शालान्त परीक्षा पास होनेका जो स्तर रखा गया है, वह बहुत नीचे दरजेका है। अिन शिक्षकोको सिखाये जानेवाले विषयोकी बहुत कम जानकारी होती है। व्यवस्थितता, निश्चितता, नियमितता और स्वच्छताकी तमाम आदतोके बारेमे अुनमे बहुत कमिया पाअी जाती है। जिन लोगोके विचार जीवन-सबधी साधारण बातोंमे भी अनुभवसे परिपक्व न हुअे हों, वे भी शिक्षक हो सकते हैं। जो मनुष्य होशियार और अुत्साही होता है वह तो शिक्षकके धधेमे आता ही नही। जो आते है वे यह शिकायत करते रहते है कि अिस नौकरीमे निर्वाहके लायक पैसा भी नही मिलता। अिन शिक्षकोको अुद्योगकी तालीम पानेके लिअे आश्रमोमे अथवा अन्यत्र खोले गये केन्द्रोमे भेजा जाता है। वहा जानेके लिअे और जाकर अेकाग्र मनसे तालीम पानेके लिअे बहुत थोडे शिक्षक राजी होते है। अधिकाश शिक्षक तो यही सोचकर तालीम लेने जाते है कि नौकरीमे पड गये है और नौकरी करनी है, अिसलिअे अफसरोके हुक्मकी तामील करनी चाहिये, और वहा वे जैसे तैसे अपना समय पूरा करते है। अैसे शिक्षको द्वारा अितना बडा प्रयोग करके अुससे अच्छे परिणामोकी आशा कैसे रखी जा सकती है?

माता-पिताका विरोध

थोड़ी बहुत कठिनाअी माता-पिताकी तरफसे भी होती है। वे अिस प्रयोगका महत्त्व नही समझते। अुनकी आंखोके सामने तो पुराने ढगकी शालाअे ही होती है। वे कहते है, हम तो अपने बच्चोको पढनेके लिअे शालामे भेजते है, अुद्योग सीखने और सफाअीके काम करनेके लिअे नही। नाटचप्रयोग, पर्यटन वगैरा अुन्हे निरे खेल मालूम होते है। अिसलिअे वे लोग शिकायत करते है कि आप तो बालकोको खेलाते रहते है अथवा अुनसे काम कराते है, पढाते कुछ नही। कामकी तो हमारे घर ही क्या कमी है? गावोके अज्ञान माता-पिता अैसा कहे तो समझमें आ सकता है। परतु सुशिक्षित माने जानेवाले बहुतसे माता-

पिता भी अुद्योगको निकम्मा मानते हैं। वे दलील देते है कि हमारे बच्चोको बादमे कहा यह अुद्योग करना है जो आप अुनका समय बिगाड़ते हैं और अुनकी असली पढाअीमे कमी करते हैं।

दूसरी बडी कठिनाअी देशकी गरीबीकी भी है। अधिकतर माता-पिताकी आर्थिक स्थिति अितनी तग होती है कि बच्चोको शालामे भेजना अुन्हे पुसाता नही। अुनके १०–१२ वर्षके बालक छोटे भाअी-बहनोको सभालनेमे माकी मदद करते हैं, ढोरोको चराने या पानी पिलाने ले जाते हैं, बापको खेत पर खाना पहुचाते है, और अिस तरहका दूसरा भी बहुतसा काम करते हैं, और वह काम माता-पिताके लिअे अितना अुपयोगी बन जाता है कि अुसे छुडवाकर वे बालकोको अैसी पढाअीके लिअे पाठशाला भेजनेको तैयार नही होते, जिसकी अुन्हें कोअी अुपयोगिता नही दिखाअी देती। अैसे बच्चोके नाम पाठशालाके रजिस्टरमे दर्ज किये हुअे हो तो भी अुनकी हाजिरी बहुत कम रहती हे।

कठिनाअियोका हल

अिन सब कठिनाअियोके कारण अिस प्रयोगको अनुकूल वातावरण नही मिलता। अुसे पैदा करनेके लिअे सब तरफसे प्रयत्न करने पडेगे। समाज-शिक्षण अथवा लोकशिक्षण द्वारा माता-पिताकी गलतफहमी दूर करनी होगी। अिस नअी तालीमका महत्त्व अुन्हे समझाना होगा और अिसमे अुनकी दिलचस्पी पैदा करनी होगी। गरीबीके कारण जो कठिनाअिया आती है वे तो गरीबी दूर करनेके अुपाय काममे लेकर ही दूर हो सकती हैं। देहातकी गरीबीका प्रश्न हल करनेका काम मुख्यत. रचनात्मक कार्यकर्ताओका है। अब तो अिसमें सरकारकी मदद भी मिल सकती है। दूसरी तरफ शिक्षकोकी कुशलता और योग्यताका स्तर अूचा अुठानेकी जरूरत है। अुन्हे भरती करनेके लिअे जो योग्यता अिस समय निर्धारित की हुअी है अुसे बढ़ाना ही पडेगा। भरती करनेके बाद अुन्हे जो तालीम दी जाती है वह भी

आजसे अधिक ठोस होनी चाहिये। सरकारी विज्ञप्तिमे बताये अनुसार अुद्योगके सिलसिलेमे होनेवाले चालू खर्च जितना स्वावलबन सिद्ध करनेका सरकार द्वारा रखा गया लक्ष्य गाधीजीकी योजनामे विश्वास रखनेवालोको भले ही कम लगता हो, परतु यदि सारी बुनियादी मानी जानेवाली शालाअे अुस लक्ष्य तक जल्दी पहुच जाय तो अभी तो हमे सतोष कर लेना चाहिये। अुद्योग शुरू करनेके कारण जो अधिक खर्च और बिगाड होता है वह तो अेक दम रुक ही जाना चाहिये। साथ ही विज्ञप्तिमे जिन वस्त्रस्वावलबी मडलोकी बात की गअी है अुनकी सख्या भी बढनी चाहिये। अैसे मडल शालाओके लिअे अवश्य ही शोभास्पद है।

जिन शालाओका प्रबध गैर-सरकारी कार्यकर्ताओके हाथमे है, अुनसे अवश्य ही अधिक अपेक्षा रहेगी। माता-पिताके सहयोगके अभाव और अुनकी गरीबीके कारण आनेवाली मुश्किले अुनके काममें भी बाधक होती है। ये शिक्षक अधिक अुत्साह और रसपूर्वक काम करनेवाले होते हैं, असलिअे अुनसे आशा रखी जाती है कि अुद्योग वगैरा प्रवृत्तियोमे वे विद्यार्थियोकी अधिक दिलचस्पी पैदा करेंगे और कुल मिलाकर अधिक अच्छे परिणाम ला सकेंगे।

४

पाठशालाअें नहीं परंतु परिश्रमालय

परतु अितनेसे ही गाधीजीका अुद्देश्य पूरा नही हो जाता। अुन्हे तो जनता पर करोका भार बढाये बिना शिक्षाको सार्वत्रिक बनाना था। अिस समय देशी राज्योके विशाल प्रदेश भारतीय सघमे मिल गये है। अुनमे कअी प्रदेश अैसे है, जहा बालकोके लिअे शिक्षाकी बहुत कम या नहीके बराबर व्यवस्था है। शिक्षाके विषयमे अुन्हे भारतीय सघके पुराने प्रदेशोंकी कतारमे लानेके लिअे वहा बहुतसी नअी शालाअें खोलनेकी जरूरत है। परतु रुपयेकी कठिनाअीके कारण सरकार शीघ्र वैसा नही कर सकती। रुपयेकी तगीके कारण शिक्षाके बजटमे

अिस वर्ष सरकारने कटौती कर दी है। गाधीजीकी योजनाको अमली रूप दिया जा सके तो अैसे प्रश्न आसानीसे हल हो जाय। अिस योजनाको कार्यान्वित करनेका रास्ता हमे खोजना ही होगा। यह भार सरकारी विभाग पर डालना मुनासिब नही। गैर-सरकारी कार्यकर्ताओंको ही योजना पर अमल करके दिखाना चाहिये और अुसके परिणाम समाज और सरकारके सामने रखने चाहिये। गुजरातमे स्कूल बोर्डकी शालाओकी व्यवस्था अुससे मागकर गैर-सरकारी कार्यकर्ता चार-पाच स्थानोमे प्रयोग कर रहे है। अुसमे भी परीक्षाओ और पाठ्यक्रमके बधनोकी तथा माता-पिताके पर्याप्त सहयोगके अभावकी कठिनाअिया बाधक होती हैं। शालाका अर्थ है पढना, लिखना और साक्षरी विषयोका अध्ययन करना। ये सस्कार लोगोके मन पर हजारो वर्षोसे पडे हुअे है। लोगोको कितना ही समझाअिये, परतु भाषा, गणित, अितिहास, भूगोल वगैरा साक्षरी विषयोने और अुनमे भी अुनकी अेक खास तरहकी जानकारीने जो महत्त्व प्राप्त कर लिया है, अुसके पैमानेसे ही किसी भी शालाको नापा जाता है। हम यह सोचे कि जिस गावमे शाला हो ही नही वहां शाला खोलकर परीक्षा वगैराके साथ अुसका सबध जोडे बिना हम यह प्रयोग करे तो वहा भी थोडे ही दिनोमे माता-पिता आकर कहने लगेगे कि आप कुछ पढाते नही है, आप तो बालकोसे काम कराते है और अुन्हे खेलाते है। अिसलिअे मुझे लगता है कि यह प्रयोग करना हो तो विद्यालय अथवा शालाका नाम छोडकर हमे काम करना पडेगा। विद्यालयमे अुद्योगको लानेके बजाय अुद्योगालयमे विद्याको ले जाना पड़ेगा। मुझे याद पडता है कि अेक बार विनोबाने अेक प्रसग पर यह कहा था कि गाव गाव पाठशाला खोलनेके बजाय परि-श्रमालय खोलना ही अधिक अच्छा है। गावके बालक वहा यह समझ कर आये कि वे पढनेके लिअे नही, परतु अुद्योग करनेके लिअे आते हैं। कार्यकर्ता तो सच्चे शिक्षक ही होगे। अुनके मनमे बालकोकी शिक्षा और सर्वांगीण विकासकी निश्चित कल्पनाअे होगी। परतु वे अपने

कार्यका आरंभ अुद्योग-शिक्षणसे और बालकोमे व्यवस्थितता और स्वच्छताकी आदते डाल कर करेंगे।

कार्यकर्ताकी योग्यता

अैसा प्रयोग करनेवाले कार्यकर्ता अथवा शिक्षककी अपनी तालीम और तैयारी बहुत पक्की होनी चाहिये। हमारे गावोमे सबसे बडा काम वहाकी गरीबी और गदगी दूर करना है। आप दूसरी कितनी ही बाते करे, परतु जब तक लोगोको अुनकी गरीबी मिटानेका प्रत्यक्ष और प्रयोगसिद्ध अुपाय नही बतायेगे, तब तक लोग आपकी बात नही सुनेगे और आप गावोकी कोअी ठोस सेवा नही कर सकेगे। अिसके लिअे गाधीजीने खादीका काम बताया है। परतु खादीका अुद्योग अेक सहायक अुद्योग है। वह फुरसतके समयका अुपयोग करके मनुष्यकी मुख्य आयमे थोडी-बहुत वृद्धि कर देनेवाला अुद्योग है। अिस दृष्टिसे अुसका महत्त्व कम नही है, परतु अकेले अुसीमे हमारे गावोकी गरीबी दूर नही हो सकेगी।

खेती और गोपालन

हमारे गावोके मुख्य अुद्योग खेती और गोपालन है। अुन पर ध्यान दिये बिना अब काम चल ही नही सकता। आज हम अैसी स्थितिमे पहुच गये है कि अिन दोनो धधोमे अुत्पादन बढाये बिना हम जी नही सकते। नहरो द्वारा अधिक विस्तारमे पानी पहुचाने और पडती जमीनको खेतीके काममे लेनेकी योजनाओ पर सरकारकी तरफसे अमल हो रहा है। परतु अिसके साथ गावकी मौजूदा खेतीका अुत्पादन भी बढाना जरूरी है। अुसमे अेक बडी रुकावट यह है कि जो खेतीके काममे कोअी भाग नही लेते या कोअी मदद नही देते, अैसे गैरकाश्तकार जमीन-मालिकोका भार खेती पर पडता है। यह भार कुछ हद तक घटानेके लिअे सरकारने कानून बनाये हैं। परतु कानूनोसे पूरा लाभ अुठानेके लिअे किसानोमे जो साहस और योग्यता चाहिये वह अुनमे पैदा करनेकी जरूरत है।

यह काम कार्यकर्ताओके स्थायी साथ और मददके बिना किसान नही कर सकेंगे। अैसे कार्यकर्ताओको खेती-कामके सच्चे जानकार बनना पडेगा। तभी वे किसानोकी सच्ची मदद कर सकेंगे। जो शिक्षक अथवा शिक्षकगण अुपरोक्त परिश्रमालयकी योजना लेकर गावमे बैठेंगे, अुनका पहला काम तो गावकी गरीबीका प्रश्न हल करनेमे गाववालोके सहायक बनना होगा। अुन्हे खेती और गोधन-सुधारका व्यावहारिक ज्ञान होगा तो ही वे अिसमे सहायक बन सकेंगे। व्यावहारिक शब्द मैंने जानबूझकर काममे लिया है, क्योकि कृषि-विज्ञानके ग्रेज्युअेटको हम गावकी खेती दिखाये तो वह तुरत कह देगा कि यहा पानीकी सुविधा नही है, किसानोके पास अच्छे साधन नही है, जमीन सुधारनेको अुनके पास पूजी नही है, अिसलिअे कुछ नही हो सकता। वह भला होगा तो सरकार नये कुअे खुदवानेके लिअे जो मदद देती है अथवा खाद बनानेके लिअे खड्डे खोदनेका जो प्रोत्साहन देती है, अुसके बारेमे लोगोको समझायेगा। हमे तो किसानको यह बताना है कि अुसे बाहरकी मदद न मिले तो भी अपने विशेष परिश्रमसे, विशेष सावधानीसे और आपसमे सहयोग साधकर वह अपनी आजकी स्थितिसे निकलकर अेक कदम आगे कैसे बढ सकता है, अेकके बजाय दो पौधे कैसे अुगा सकता है। कोअी आलोचना करेगा कि आप तो शिक्षकको बहुत बडा काम बता रहे हैं, अुससे आप अत्यधिक अथवा न रखने लायक आशा रखते है। परतु अिस समय मै साधारण शिक्षककी बात नही कर रहा हूं। सामने जो घना अधेरा दिखाअी दे रहा है अुसमे दीपक बनकर दूसरोके लिअे पथ प्रकाशित करनेवाले अथवा जगलकी झाडिया काटकर दूसरोके लिअे रास्ता बनानेवाले वीर और साहसी शिक्षककी बात कर रहा हूं। अैसे शिक्षकको सारे गावको अपनी शाला बनाना होगा। तभी वह अपने परिश्रमालय अथवा ग्रामशालाके लिअे लोगोमे दिलचस्पी पैदा कर सकेगा।

गावकी खेती और गावका गोधन सुधारनेकी दृष्टिसे वह खेती और गोपालन दोनोकी सहकारी समितिया बनाकर सयुक्त खेती और सयुक्त गोपालनकी योजना बनायेगा। अपने परिश्रमालयको भी वह सहकारी समितिका सदस्य बनायेगा। परिश्रमालयके विद्यार्थी भी खेतोंमे मजदूरी करने और ढोर चराने जायगे। शिक्षक स्वय भी मजदूरी करते-करते लोगोका पथप्रदर्शन करेगा।

पहले कदम

यदि दो शिक्षक अिस प्रयोगके लिअे गावमे गये होगे, और दो जनोका जाना ही ठीक है, तो यह जरूरी है कि दोनोको खेती और गोपालनके सिवाय वस्त्र-विद्या और बढअीगिरीमे से अेक अेक अुद्योग आता हो। साथ ही आठ वर्षके पाठचक्रमवाली बुनियादी शाला चलानेके लिअे साक्षरी विषयोका जितना ज्ञान आवश्यक माना जाय अुतना तो कमसे कम अुन्हे होना ही चाहिये। अुनकी दृष्टि वैज्ञानिक होनी चाहिये। वे परिश्रमालयमे विद्यार्थी बढानेकी अुतावली न करे। प्रारभ वे अेक अेक विद्यार्थीसे ही करे तो सुविधाजनक होगा। ये विद्यार्थी स्वतत्र रूपमे अुद्योगकी कुछ खास क्रियाअे करने लग जाय तब दूसरे विद्यार्थी भरती किये जाय। कोअी छ महीनेमे तो शुरूमे आये हुअे विद्यार्थियोसे अुद्योगकी कुछ विशेष क्रियाअे सिखानेके लिअे सहायकके रूपमे भी काम लिया जा सकेगा।

अुद्योग सिखाते-सिखाते ही अुसके स्वाभाविक अनुबधमे आनेवाली वैज्ञानिक, यात्रिक और सामाजिक विषयोकी जानकारी वे जबानी ही विद्यार्थीकी योग्यतानुसार देते रहे। फिर छः महीने या बारह महीनेके बाद वे अक्षरज्ञान देना प्रारभ करे। अुनके पास किस अुम्रके बालक आते है, यह देखकर अुन्हे अपने कामका समय-पत्रक बनाना होगा। संभव है बालवाडी, बुनियादी शिक्षा और प्रौढ-शिक्षा तीनों काम अुन्हें शुरू करने पड़े। दो शिक्षक कितना काम सभाल सकते हैं और गावमे से कितने सहायक तैयार कर सकते है, अिस पर कामकी

व्यवस्थाका आधार रहेगा। जिस कामकी व्यवस्था स्थानीय परिस्थितिके अनुसार अनुभवके आधार पर करनी है, अुनके अधिक ब्योरेमें हम नही जा सकते।

शिक्षकोंकी आजीविका

अिस प्रयोगके आर्थिक पहलूका थोडासा विचार कर लेना चाहिये। अिस समय हमारे गाव अितनी गरीब हालतमे है कि अिन शिक्षकोको अपनी आजीविकाका पाच-सात वर्षका प्रबध करके ही गावोमे जाना पडेगा। अितने समयमे अुन्हे गाववालोको अपनी अुपयोगिता अिस हद तक सिद्ध कर दिखानी चाहिये और गावकी आर्थिक स्थिति सुधारनेमे अितना हिस्सा ले चुकना चाहिये कि गाववाले अुनके निर्वाहका भार खुशीसे अुठा ले। गाववाले यह भार न अुठा सके तो अपने शरीर-श्रमसे अपना निर्वाह कर लेनेकी शक्ति तो अुनमे होनी ही चाहिये। अितने अर्सेमे अुनका परिश्रमालय अथवा ग्रामशाला अितनी अच्छी तरह चलने लग गअी होगी कि अुसके अुत्पादनसे शिक्षकोके निर्वाह जितना पैसा मिल जाय। परिश्रमालयके लिअे छप्पर तथा शिक्षकोके रहनेकी झोपडिया गावमे मिल जाय तो अुत्तम बात होगी। अुनका किराया देना पडे तो भी चिन्ता नही। वर्ना अुन्हे बनानेके लिअे गाववालोकी मेहनत और बाहरसे कुछ नकद रकम जुटानी पडेगी। अिन मकानों पर गावका ही सार्वजनिक स्वामित्व माना जायगा। थोडेसे बढअीके औजार और बुनाअीके लिअे अेक दो करघे शुरूमे बाहरसे लाने पडेगे, फिर तो आवश्यक साधन धीरे धीरे गावमें ही बना लेने चाहिये।

विद्यार्थियोंका मेहनताना

परिश्रमालयमे सीखने आनेवाले जो कुछ अुत्पादन करे अुसका कुछ भाग अुन्हे देना होगा। कुछ भाग व्यवस्थाके लिअे सुरक्षित रखा जाय। कितना भाग दिया जाय, यह स्थानीय परिस्थितिया देखकर तय कर लिया जाय। सीखने आनेवालोको अमुक भाग देनेकी बात मैं

अिसलिअे कह रहा हू कि लोगोकी गरीबी अितनी बढी हुअी है कि अुनकी मजदूरीके बदलेमे अुन्हे अुचित रकम मिले तो ही अुनमे काम करनेका अुत्साह रह सकता है। चौदह वर्षके बालकोको घरका खिला कर शालामे पढने भेजने जैसी आर्थिक स्थिति जिन माता-पिताकी नही हो, अुनके बच्चोको अुन्होने जो कुछ अुत्पादन किया हो वह दे देना ही ठीक मालूम होता है।

नअी तालीमके पूरे प्रयोगका प्रारभ किस ढगसे किया जा सकता है, अुसकी थोडीसी कल्पनाके रूपमे मैने यह कहा है। यद्यपि यह कल्पना है, फिर भी हमारे गरीब गावोकी स्थिति और हमारी वर्तमान बुनियादी शालाओके निरीक्षण पर अुसका आधार है। अिस प्रकारके प्रयोग तीन चार गावोमे करनेके लिअे पूरी योग्यतावाले साहसी वीर निकल आये तो हम अुनके पाच सात वर्षके अनुभवसे गाधीजीकी योजनाके अनुसार शिक्षाका श्रीगणेश करनेकी स्थितिमे आ सकेगे। और वह श्रीगणेश कर सके तो अुसके आगेके कामके लिअे मौजूदा बुनियादी शालाओके प्रयोग अुपयोगी सिद्ध होगे। वे अपनी शक्ति और परिस्थितिके अनुसार कुछ न कुछ तो करती ही है। अैसे मौलिक प्रयोगोसे अिन शालाओको बहुत प्रेरणा और जानकारी मिल सकती है। अैसे मौलिक प्रयोगोसे ही अनुबधवाले शिक्षणकी सच्ची कला हाथ लगेगी। बुनियादी शालाओका पाठ्यक्रम कैसा हो, अिसकी कल्पना भी अैसे प्रयोगोसे मिल सकती है, यद्यपि गाधीजीकी शिक्षण-योजनामे तमाम शालाओके लिअे अेकसा पाठ्यक्रम बनाना ठीक नही। स्थानीय परिस्थितिके अनुसार पाठ्यक्रममे फेरबदलके लिअे गुजाअिश होनी ही चाहिये। परतु योजनाको तत्रबद्ध करनेकी जिम्मेदारी जिस पर है अुसका काम तो निश्चित पाठ्यक्रमके बिना चलेगा नही। अिस हद तक योजनाके प्राण अवरुद्ध भी जरूर होगे। अिस प्रकार अिस योजनाको सदा जीती-जागती रखनेके लिअे और

तत्रबद्ध पद्धतिसे काम करनेवालोको प्रेरणा मिलती रहे अिसके लिअे स्वतत्र ढग पर काम करनेवाले प्रयोग-वीरोकी जरूरत हमेशा रहेगी।

२० मअी, १९५०

२

अितिहासकी शिक्षा — कुछ सुझाव

सन् १९३७ मे गाधीजीने बुनियादी शिक्षाकी योजना मित्रोके सामने रखी, अुसके बाद अुसका पाठचक्रम तैयार करनेके लिअे अेक कमेटी नियुक्त की। वह जाकिरहुसेन कमेटीके नामसे प्रसिद्ध है। श्री किशोरलालभाअी अुसके अेक सदस्य थे। अुस कमेटीके दिये हुअे पाठ्यक्रममे अितिहासका भी पाठचक्रम दिया गया है। अुसके साथ श्री किशोरलालभाअीका मतभेद था। जाकिरहुसेन कमेटीके पाठ्यक्रममे ठेठ प्राचीन कालसे शुरू करके क्रमशः अर्वाचीन कालके अितिहास पर आना होता है। अुसमे पहली कक्षामे अर्थात् सात वर्षकी अुम्रके बालकोको ठेठ प्रारभिक दशामे जीवन बितानेवाले आदिमनुष्य किस तरह शिकार करके अथवा जमीनके भीतरसे कंदमूल खोद कर अपना भोजन प्राप्त करते, पेडो पर या गुफाओमे रहते तथा पेडोकी छाल, पत्ते और चमडोका अुपयोग शरीर ढंकनेके लिअे करते थे, और अुसमे से वे खुराकके लिअे पशुपालन तथा सादी खेती पर आये, रहनेके साधनोमे अुन्होने कुछ सुधार किये और कपडोके लिअे अून, कपास और रेशमका अुपयोग करने लगे — वगैरा बाते कहनी होती है। अिसी प्रकार वे लकडी, पत्थर, कासे और लोहेके हथियार और औजार क्रमश काममे लेने लगे, घोडे, गाय, कुत्ते वगैरा पालकर अुनका अुपयोग करने लगे, अपनी आवश्यकताअे, भावनाअे तथा विचार प्रगट करनेके लिअे भाषाका

प्रयोग करने लगे, चित्र बनाने लगे और लिखना भी शुरू किया –– यह सब कहानीके रूपमे और नाटकके रूपमे अैसी प्रवृत्तिया करा कर सिखाना होता है। अिसके बादके काफी प्राचीन कालके मनुष्यका जीवन कैसा था, यह भी कहानियो द्वारा कहना होता है। अुसमे मिस्र देशमे गुलामोसे मजदूरी कराकर पिरामिड बनवाये गये, मोहन-जो-दडोमे बालक क्या क्या करते होंगे, वेदोकी शुन शेपकी कहानी, वगैरा बाते कहना, चीनके पहले पाच बादशाहोकी कहानी कहना अथवा अुसका अभिनय कराना होता है। साथ ही अति. प्राचीन कालके प्रारभिक दशाके मनुष्यो जैसा जीवन बिताने-वाले जो लोग आज भी पृथ्वी पर कही कही है –– जैसे अरबस्तानके बेदू लोग और अुत्तरी ध्रुवके पासके प्रदेशके अेस्किमो लोग –– अुनकी बाते भी कहना और अनका अभिनय कराना होता है। शिक्षक बहुश्रुत और कलावाला हो तो अिसमे बालकोका रस पैदा कर सकता है और आनद भी अुत्पन्न कर सकता है तथा आजकलके साधन-सपन्न जीवनके बजाय अैसा कम साधनोवाला जीवन भी मनुष्यका किसी समय था, अिसके थोड़े वहुत सस्कार बालकके दिमाग पर शायद डाल सकता है। अलबत्ता, अिसमे बालकोकी तर्कशक्ति और कल्पनाशक्ति पर जरूरतसे ज्यादा जोर पडनेका डर भी है।

हकीकत तो यह है कि हमारे आजकलके थोडी ज्ञान-पूजीवाले शिक्षकोके लिअे ही यह पाठ्यक्रम बडा कठिन पडता है। चीज भले ही कठिन न हो, परतु अुसे पाये कहासे? प्रान्तीय भाषाओमे अैसी जानकारी देनेवाली जैसी चाहिये वैसी पुस्तके नही है। अिस पाठ्य-क्रमके अनुसार प्रान्तीय भाषाओमें पाठ्यपुस्तके तैयार की जा सकती है। परतु अिससे हमारा दारिद्र्य नही मिटेगा। शिक्षकके पास अिस पाठ्यक्रमके आसपासकी बहुतसी जानकारी हो तो ही वह अिन अैति-हासिक कहानियोंको आकर्षक और प्रभावकारी बना सकता है। अग्रेजीमे अैसी जानकारी देनेवाली अनेक पुस्तके होनेके कारण अग्रेजी पढे हुअे पाठ्यक्रम तैयार करनेवालोंको जो चीज आसान लगती है, अुसका प्रान्तीय

भाषाके पूरे साहित्यसे भी अच्छी तरह परिचित न रहनेवाले हमारे शिक्षकोको बहुत कठिन प्रतीत होना स्वाभाविक हे।

श्री किशोरलालभाअीका मत यह है कि अितिहासकी शिक्षा निकटके कालसे शुरू होनी चाहिये और धीरे धीरे प्राचीन काल पर पहुचनी चाहिये। प्राचीन अितिहासका अध्ययन अूपरकी कक्षाओमे हो। अिसी प्रकार शालाके समीपवर्ती प्रदेशका अितिहास पहले पढाना चाहिये और क्रमश अुसके क्षेत्रका विस्तार करते जाना चाहिये। मुझे यह दूसरी वस्तु अधिक महत्त्वकी लगती है। क्योकि शहरके बालक जिन वस्तुओ और घटनाओमे रस ले सकते है और अुन्हे आसानीसे समझ सकते है, अुनमे गावके बालक रस नही ले सकते। न अुन्हे आसानीसे समझ सकते है। गावके बालकोका रस बिलकुल दूसरी बातो और घटनाओमे होगा और अुन्हीको वे आसानीसे समझ भी सकते है। अिसी प्रकार जगलके पासके प्रदेशके, पहाडके पासके प्रदेशके और समुद्रके निकटवर्ती प्रदेशके अर्थात् भिन्न भिन्न प्रदेशोके बालकोकी दिलचस्पी और समझके विषय अलग अलग होगे। अधिक परिचितसे कम परिचित ओर अुससे अपरिचितकी ओर —— अिस क्रमसे आगे बढनेका सिद्धान्त हम स्वीकार करते हो, तो भिन्न भिन्न प्रदेशोके बालकोके लिअे अितिहास और भूगोलका क्रम हमे भिन्न भिन्न रखना चाहिये। अिसलिअे अेक ही प्रकारकी पाठचपुस्तकोसे सब जगह काम नही चलेगा। हालमे ही श्री विनोबाने सेवाग्राममे अेक भाषण दिया, जिसमे यह विचार प्रगट किया है कि नअी तालीमको नित्य नअी तालीम रहना पडेगा। यह भी कहा कि भिन्न भिन्न प्रदेशोके लिअे भिन्न भिन्न पाठचपुस्तकें होनी चाहिये।

> “प्रत्येक गावकी परिस्थिति अलग-अलग होती है। अुसीके अनुसार शिक्षाका विचार करना पडेगा। जहा नदीतट होगा वहा अेक प्रकारकी, जहा पहाड होगा वहां दूसरे प्रकारकी, और जहा आसपास जगल होगा वहां तीसरे प्रकारकी शिक्षा होगी।

प्रत्येक गावका वातावरण देखकर अुसकी रचना करनी होगी। अिसके लिअे खास अेक ही तरहकी योजना अथवा निश्चित पुस्तके काम नही देगी। आजकल सब प्रान्तोके लिअे अेक ही प्रकारकी पुस्तके सारी शालाओमे चलती है। अिससे गावकी जो विशेषता और भिन्नता होती है अुसकी कोअी कल्पना नही होती, अेक सर्वसामान्य पुस्तकमे बालकोको रस नही आता और अलग अलग प्रकारके गावोके लिअे वह कामकी नही रहती।

"हमारी पाठशालाओके लिअे पुस्तकोकी जरूरत रहेगी, परतु वे अलग अलग गावोकी स्थितिको ध्यानमे रखकर अलग अलग ढग पर लिखी हुअी होगी। जो अितिहास सेवाग्रामकी शालामे पढाना होगा अुसमे सेवाग्रामकी सब सस्थाओका अितिहास होगा, अुसमे यह भी होगा कि सेवाग्राम गाव कैसे बना, अुसमे गावके वृद्ध जनोका अनुभव होगा और अिस प्रकार वह सजीव अितिहास होगा। भूगोलमे भी सेवाग्राम और अुसके आसपासकी स्थितिका विशेष वर्णन होगा। जिस गावमे हम रहते होगे अुसे दुनियाका मध्यबिन्दु मानकर अुसके आसपास दुनिया मौजूद है, यह समझकर भूगोलकी शिक्षा दी जायगी।"

अिस पुस्तकमे श्री किशोरलालभाअीकी 'जडमूलसे क्रान्ति' नामक पुस्तकसे अुनका 'अितिहासका ज्ञान' नामक लेख लिया गया है। अुसमें अुन्होने अेक दूसरी ही और बडे महत्त्वकी वस्तु पर जोर दिया है। अुन्होंने कहा है कि अितिहासके ज्ञान और शिक्षणको आजकल बहुत महत्त्व दिया जाता है, परंतु वह अितने महत्त्वका पात्र नही है। क्योकि किसी भी घटनाका सोलह आने सच्चा अितिहास हमे शायद ही मिल पाता है। स्वय अपनी की हुअी या कही हुअी बातोकी भी मनुष्यकी स्मृति अितनी जल्दी मन्द पड जाती है कि थोडे समय बाद अुसमें सत्य और कल्पनाका मिश्रण हो जाता है। साथ ही, अितिहास पढकर हम भूतकालके बारेमें जो कल्पनाअे करते है वे अुचितसे बहुत अधिक व्यापक

होती है। लोकजीवनके वर्णनके रूपमे जो जानकारी दी हुअी होती है, वह अधिकाशमे लोगोके बहुत थोडे भागके जीवनकी जानकारी होती है। फिर भी हम अुसे समस्त जनसमाजकी स्थितिके रूपमे समझते है। किसी राजा अथवा राजधानीके शहरकी समृद्धिके वर्णन परसे पाठकके मन पर अैसा असर पड जाता है मानो सारा देश समृद्ध होगा। नालदा जैसे विद्यापीठों अथवा गुरुकुलोके वर्णन पढकर अैसी छाप मन पर पडती है कि सारे देशमे विद्याका खूब प्रचार होगा और देशके सभी बालक अिन विद्यापीठो और गुरुकुलोमे पढने जाते होगे। गार्गी जैसी विदुषीके वर्णन परसे यह छाप मन पर पड़ती है कि प्राचीन कालमे सभी स्त्रिया खूब पढी-लिखी होगी। किन्तु यह मानना वैसा ही होगा, जैसा आजकल सरोजिनी नायडू अथवा विजयालक्ष्मी पडितका वर्णन पढकर यह मान लिया जाय कि भारतमे सभी नही तो बहुत बडे भागकी स्त्रियां अैसी ही विद्वान और आगे बढी हुअी होगी। अिसलिअे अिति-हास पढकर न केवल व्यापक अनुमान ही नही लगाने चाहिये, बल्कि तुरन्त यह भी नही मान लेना चाहिये कि अितिहासमे आनेवाली सभी घटनाये ठीक अुसी तरह हुअी होगी।

आश्रमकी पाठशाला और गूजरात विद्यापीठ दोनोमे अितिहास पढानेका काम मैंने कअी बार किया है। अुस अनुभवसे मै तो अिस परिणाम पर पहुचा हू कि जब तक विद्यार्थी बडी अुम्रका न हो जाय तब तक अुसे व्यवस्थित अितिहासकी शिक्षा देना व्यर्थ है। आजका हमारा जीवन — हमारे आदर्श, हमारी आकांक्षाअे, हमारी सामाजिक, धार्मिक, राजनैतिक और आर्थिक संस्थाअे सब — अब तकके हमारे अितिहासका परिणाम है। यह समझनेके लिअे पहले तो हमे आजके जीवनका अच्छी तरह निरीक्षण करना चाहिये। बादमें अुसके कारणोकी जाच करनी चाहिये। अपने देशका विचार करे तो हमारी वर्तमान स्थिति हमारे पूर्वजोके अच्छे कार्यो और भूलोका तथा विदेशोकी जिन जिन प्रजाओसे हमारे देशका संबंध हुआ अुसका परिणाम है। अिस प्रकार

हमारी वर्तमान स्थितिका भूतकालकी अनेक घटनाओके साथ कार्य-कारण सबध है। यह सब समझानेका अितिहासका दावा है। परतु जैसा श्री किशोरलालभाअी कहते है, हमे अुपलब्ध अितिहास ही यदि दोषपूर्ण अथवा भूलभरा हो, तो अुससे न केवल हमारी वर्तमान स्थितिका सही स्पष्टीकरण नही मिलेगा, प्रत्युत वह हमे गलत रास्ते पर भी ले जायगा। यह सब समझना प्राथमिक या माध्यमिक शालाके विद्यार्थीकी शक्तिसे बाहर माना जायगा। जिसे सामाजिक परिस्थितिका और समाजके प्रश्नोका कुछ न कुछ खयाल हो, वही अितिहासको अच्छी तरह समझ सकता है और अुससे लाभ अुठा सकता है। मै मानता हू कि अिस समय प्राथमिक और माध्यमिक शालाओमे जिस प्रकारका और जिस ढगसे अितिहास पढाया जाता है, अुससे विद्यार्थीको कोअी लाभ नही होता, बल्कि नुकसान ही होता है। मेरी राय यह है कि अितिहास पढाना हो तो भी कॉलेजो अथवा अुत्तर-बुनियादी शालाओमे ही पढाना चाहिये। और, वह अितिहास भी अच्छी तरह परिमार्जन करके नअी दृष्टिसे लिखा जाना चाहिये।

यह नअी दृष्टि कैसी हो? पहले तो हमे यह वस्तु मानकर चलना होगा कि भूतकालमे हुअी सभी बाते कोअी याद रखने लायक या अितिहासमे दर्ज करके रखने जैसी नही होती। कुछ बाते तो खास तौर पर भूल जाने योग्य होती है। अैसी भूल जाने लायक वस्तुओको हम अितिहासकी पुस्तकोमे दर्ज करते रहेगे, तो हम मनुष्य मनुष्यके बीच अीर्ष्या-द्वेष और वैरभावको जीवित रखेगे और अुसे पोषण देगे। अुदाहरणके लिअे, हिन्दुओका मुसलमानोके साथ आठ सौसे भी अधिक वर्षोका सबध रहा है। अुसमे हिन्दू-मुसलमानोमे कअी बार लडाअिया हुअी है, और दोनों जातियोने अेक-दूसरेके साथ मेल भी साधा है। जिस हद तक मेल साधा है अुस हद तक दोनोको लाभ हुआ है। मनुष्य मनुष्यके बीच भ्रातृप्रेम और समानताकी अिस्लामी

भावनाने हिन्दुओकी अधिकार-भेद और अूचनीचकी भावना पर बनी हुअी समाज-रचनाको सुधारनेमे कम असर नही डाला। जब भारतमे राज-सत्ता मुसलमानोके हाथोमे थी तब पद्रहवीसे अठारहवी सदीके बीच हिन्दुओमे जो अनेक साधु-सन्त हो गये, अुन पर अिस्लामी अेकेश्वरवाद और भ्रातृभावका बहुत असर पडा होना चाहिये। अिसी प्रकार मुसलमान औलियो और सूफीपथके मस्त फकीरो पर वेदान्त और अुपनिषदोके सिद्धान्तोका प्रभाव भी कम नही पडा। अिस प्रकार दोनोके अुत्तम तत्त्वोके सुमेलसे नअी भारतीय अथवा हिन्दुस्तानी सस्कृति निर्माण हुअी है। भारतकी भाषाअे, लोगोके रीतरिवाज वगैरा अिसी सुमेलके परिणाम है। यह सब किस प्रकार हुआ, यह हिन्दू सतो तथा मुसलमान औलियोंके जीवन कैसे थे और अुनका दोनो जातियोकी आम जनता पर कैसा असर पडा, अिसका वर्णन करके समझानेका काम मै अितिहासका मानता हू। अुत्तर भारतका अितिहास जैसे मुसलमानोके साथ हुअे ससर्गसे रगा गया, वैसे दक्षिण भारतके अितिहासमे अीसाअियोके ससर्गका असर भी काफी पाया जाता है। अितिहासमें यह सब देखने और समझनेके बजाय राजाओके अितिहास परसे — अुन्होने अपनी राजनैतिक महत्त्वाकाक्षाओ तथा स्वार्थोको पूरा करनेके लिअे देशकी भिन्न भिन्न जातियोको अेक-दूसरेसे लडाया हो, कभी अेक जातिको तो कभी दूसरीको अपने पक्षमे लेकर अुस पर मेहरबानी दिखाअी हो अथवा अुस पर नाराजी जाहिर की हो और अुससे अलग अलग जातियोमे अीर्ष्या-द्वेषके बीज बोनेका प्रयत्न किया हो अुस परसे यह अनुमान लगाकर कि दोनो जातिया अेक-दूसरेके साथ द्वेष करती अथवा लडती रही है हम अुसे अितिहासमें दर्ज करे, तो यह बालकोको अीर्ष्या-द्वेषका अितिहास पढाने और अिस प्रकार अीर्ष्या-द्वेषको जिन्दा रखनेका ही काम होगा। आज मुसलमानोके सबधमे हिन्दुओके मनमे और हिन्दुओके सबधमे मुसलमानोके मनमे जो द्वेष और अविश्वास अथवा अरुचिकी भावना है, वह अिस बातका परिणाम

है कि दोनो जातियोके बीच हुअी लडाअियोकी घटनाओको हम विस्मृतिके गर्तमे नही दफना सके, कुछ याद रखने जैसी हकीकतोको अच्छी तरह दर्ज करके नही रख सके, कुछ तथ्योका विकृत रूपमे अुल्लेख किया गया है और कुछ घटनाअे जो कभी घटी ही नही सच्ची अैतिहासिक घटनाओके रूपमे अितिहासमे प्रचार पा गअी है। यो तो अितिहास-शोधक कहते है कि बौद्धो और ब्राह्मणोके बीच तथा गुजरातमे जैनो और ब्राह्मणोके बीच कम लडाअिया नही हुअी। परतु साधारण अितिहासोमे यह चीज नही आती, अिसलिअे जनताको अिस विषयका कोअी खयाल नही है और अिसलिअे अिन धर्म-सप्रदायोके लोगोके बीच आज कोअी अीर्ष्या-द्वेष नही है। अैसा ही हिन्दू-मुसलमानो और अीसाअियोके सबधमे करनेकी जरूरत है। पाकिस्तान अलग हो गया है, फिर भी हिन्दुओ और मुसलमानोको पाकिस्तान और भारत दोनोमे अिकट्ठे रहे बिना कोअी चारा नही है। अेक देशके भीतर रहनेवाली अलग अलग जातियोके बारेमे जैसा विचार करना चाहिये, वैसा ही विचार अलग अलग देशोके बारेमे भी करना चाहिये। अेक देशकी दूसरे देशके साथ लडाअी होनेकी घटनाअे अितिहासमे दर्ज करके रखी जाती है। परन्तु अेक-दूसरेके बीचके जीवन-व्यवहारकी अनेक शान्तिपूर्ण घटनाअें अुत्पात मचानेवाली न होनेके कारण दर्ज नही की जाती। अिसलिअे बालकोके मन पर यह असर पडता है कि विदेशियोको तो शत्रु जैसे मानकर अुनसे हमेशा होशियार ही रहना चाहिये। अिससे बालकोंके दिलमे गलत देशाभिमान अुत्पन्न होता है, जिसके कारण अैसी भावनाको पोषण मिलता है कि अपने देशकी बात अुचित हो या अनुचित, परतु हमे तो अपने देशका ही पक्ष लेना चाहिये।

अितिहास-लेखकको भूतकालकी बाते दर्ज करनेमे बडे विवेकसे काम लेना चाहिये। अुसे अेक भी असत्य बातका कभी प्रचार नही करना चाहिये। तथ्योको विकृत रूप देना असत्य जैसा ही अथवा अुससे

भी बुरा है। परतु सच्ची घटनाओको, जिनकी तहमे मनुष्यकी मूर्खता अथवा रागद्वेष हो, भुला दिया जाना चाहिये। अीर्ष्या-द्वेष पीढी दर पीढी बना न रहे परतु भुला दिया जाय ओर मानवकुलकी भिन्न भिन्न शाखाअे अेक-दूसरेके नजदीक आये और आपसमे मिलजुल कर रहे, अैसा वातावरण पैदा करनेमे अितिहासकार काफी हाथ बटा सकता है।

मैंने अूपर कहा है कि अितिहासकी शिक्षा अैसे विद्यार्थियोको दी जा सकती है, जिनके विचार और अुम्र कुछ पक गये है और जो सामाजिक घटनाओकी तहमे रहनेवाले कार्यकारण सबंधको समझ सकते हैं । तो फिर क्या बुनियादी शालाओमे अितिहासके लिअे स्थान हो सकता है? मेरे खयालसे अुनमे कालानुक्रममे गूथा हुआ सारा अिति-हास पढानेकी जरूरत नही। कालानुक्रमका थोडा-बहुत खयाल भी बडी अुम्रमे ही हो सकता है। अिसलिअे बुनियादी शालाओमे तो बच्चोको दिलचस्प लगनेवाले अैतिहासिक व्यक्तियो और घटनाओकी बाते ही कही जा सकती है। जनकल्याणके लिअे, स्वाभिमान तथा शीलकी रक्षाके लिअे, अन्त.करणके विश्वासके लिअे अथवा अैसे ही किसी अूचे हेतुके लिअे कुर्बानी करनेवाले तथा कष्ट सहन करनेवाले व्यक्तियो, संतजनो, धर्मवीरो, साहसी प्रवासवीरो, वैज्ञानिक शोधको, विद्याके अुपासको, और लोकनेताओ आदिकी बाते आ सकती हैं। अिनमे अच्छे राजाओकी बाते भी शामिल की जा सकती है। व्यक्तियो तथा समूहके सत्याग्रहकी घटनाओको स्थान दिया जा सकता है। ये बाते कक्षावार चढते क्रमसे रखी जानी चाहिये। अिससे पूरे अितिहासका ज्ञान तो नही मिलेगा, मगर अितिहासके विषयका कुछ परिचय हो जायगा। समाजको किस मार्ग पर ले जाना है, अिसका खयाल शिक्षकके मनमे सदा ही होना चाहिये और अैसी बातोके द्वारा अुस दिशामे जानेकी वृत्तिको पोषण मिलना चाहिये।

२२ मअी, १९५०

शिक्षाका विकास

पहला भाग

साबरमती

१

शिक्षाके लक्षण

१

जीवामिया नामक अेक मुसलमान किसान है। पहले वह तेलीका धन्धा करता था, परन्तु कुछ वर्षोसे खेती कर रहा है। मामूली लिखना-पढना जानता है। खेतीके कामसे फुरसत मिलती है तब वह बढअीका काम करता है; बढअीके रूपमे वह साप्ताहिक बाजारमे बिक सकनेवाला सामान — खाटे, पेटिया, चलनिया वगैरा बनाता है; साथ ही वह कलअी करने और झालनेका काम तथा सादा लुहारी काम भी जानता है। खाट भरनेकी सन वगैराकी डोरी वह अपने-आप बुन लेता है।

अुसके अक्षर अच्छे नही है, (परन्तु सुलेखनकी परीक्षामे कितने अध्यापक पास होगे, यह शकास्पद ही है) फिर भी वे पढे जा सकते है। वह अितना व्यवहार-कुशल है कि अुसे कोअी आसानीसे धोखा नही दे सकता। गावका मुखिया या बाजारका दुकानदार अुसके 'भोलेपनका लाभ' नही अुठा सकता।

मैंने अुसे हमेशा अुत्साहपूर्ण और आत्मविश्वासी देखा है। दो अढाअी महीनेसे वह नअी जमीन लेनेके लिअे अेक आदमीसे बातचीत किया करता था। परन्तु बातका निपटारा न होनेसे घर बैठा था। फिर भी अुसके मुख पर चिन्ता नही थी, क्योकि वह घडी भर भी निकम्मा नही बैठता था। वह अपने बढअीके और दूसरे फुटकर कामोसे गुजरके लायक कमा लेनेका विश्वास रखता था।

वह अकेला नही है। अुसे अपने सिवाय और चार आदमियोंका पोषण करना पडता है। अुनमे दो छोटे बच्चे है, अेक लडका 'फेरी' में

और सामान अुठाने व ले जानेमे मदद करने लायक ही है। मुसलमान होनेके कारण अुसकी स्त्री बाहर मजदूरीके लिअे नही जाती।

अुसे समझ लेनेकी जितनी फुर्सत मिलती है अुसके हिसाबसे वह देशकी स्थिति काफी समझता है। खादी, चरखा, असहयोग, गांधीजी — अिन सबके बारेमे वह बिलकुल अनजान नही है। अिनमे वह दिलचस्पी भी लेता है, परन्तु अुसकी भावनाये जितनी चाहिये अुतनी विकसित नही हुअी है, अिसलिअे अिन कामोमे अुसका स्वाभाविक अुत्साह तीव्र रूपमे प्रगट नही होता। फिर भी वह कहता था कि अुसने बुनाअी सीखनेके लिअे आश्रममे रहनेकी माग की थी।

लगभग अेक महीने तक मुझे रात-दिन अुसके सहवासमे आनेका मौका मिला। अुस अर्सेमे मैने अुसके या अुसके बच्चोके मुहसे अेक भी अपशब्द नही सुना। अुसके बच्चोमे मुसलमान जातिका स्वाभाविक अुद्धत तेज था और अुस तेजके कारण अुनका अूधम माता-पिताको जब असह्य हो जाता तब वे बच्चोको मारते भी थे, परन्तु अुनमे क्षण क्षणमे क्रोधसे या गाली देकर बच्चोको बुलानेकी आदत नही थी। जब गुस्सा करनेकी बात न होती तब प्रेमभरे 'बेटा' शब्दसे ही वे बच्चोको सबोधन करते। कभी कभी फारसी या अुर्दू भजन गाते भी मैने अुस कुटुम्बको सुना था।

अिनके जीवनमे मुझे अेक खामी मालूम हुअी। ये लोग आठ-आठ दिन तक नहाते नही थे और कपडे तो न जाने कितने दिनमे धोते होगे। गदगीसे अुन्हे नफरत नही होती थी।

अिस खामीको छोड दे तो मेरे खयालसे अिस मियाको हम पूर्ण कुमार-मदिरकी शिक्षा पाया हुआ मान सकते है। हमारे देशका अेक-अेक मनुष्य अितना शिक्षित दिखाअी देगा, तब हमारा प्राथमिक शिक्षाका प्रश्न हल हुआ माना जायगा।

अिसमे से कितनी शिक्षा अुसे पाठशालामे मिली होगी? 'शिक्षा' का प्रचार करनेवाले अिस प्रश्नको किस दृष्टिबिन्दुसे देखे,

असका मेरे खयालमे यह भाअी अेक अच्छा पदार्थपाठ हमारे समक्ष पेश करता है।

२

अेक बार मै थोडे दिनके लिअे आबू पर्वत पर गया था। मुझे गाडीके 'ठेकेदार' के कार्यालयमे जाना था। रास्तेका मुझे अच्छी तरह पता नही था। अिसलिअे मै रास्ते चलनेवाले आदमियोसे पूछता पूछता आगे बढ रहा था। दो गोरे विद्यार्थी सामनेसे आ रहे थे। अेककी अुम्र तेरह-चौदह वर्षकी और दूसरेकी ग्यारह-बारह वर्षकी होगी। मैंने अिन लडकोसे ठेकेदारके कार्यालयका रास्ता पूछा।

बडे लडकेने थोडी-सी सूचना दी, परन्तु वह छोटे लडकेको अधूरी लगी। वह जमीन पर घूटनोके बल बैठ गया और अगुलीसे रेतमे अुसने हम जहा खडे थे वहासे ठेकेदारकी दुकान तकका रास्ता नक्शा खीचकर बता दिया। फिर रास्तेमे आनेवाली सूचक दुकानो और जगहोके स्थान बताये और यह समझाया कि 'अुस कुअेके पास जरा टेढे सामनेकी ओर जो भूरा बगला आयेगा वही ठेकेदारका दफ्तर है।'

यह समझाने और रास्तेमे नक्शा खीचनेका काम अुस लडकेने अितनी चपलता और विवेकसे किया कि मुझे अैसा लगा कि सचमुच यह लडका 'शिक्षित' है।

रास्ता सीधा नही था। दाअी बाअी तरफ वह कअी तरहसे सापकी तरह मुडता था, परन्तु अुसने मुझे लगभग ठीक रास्ता बता दिया। मै विद्यापीठ कार्यालयसे रोज साबरमती आश्रम जाता हू, परन्तु आज भी मुझे अैसा नही लगता कि मै रास्तेके सारे मोड अच्छी तरह खीच कर बता सकता हू। मुझे अैसा लगे बिना नही रहा कि वह लडका मुझसे अधिक अच्छी तरह 'शिक्षित' हुआ है। फिर भी मैं अपने नामके आगे दो अुपाधिया लिख सकता हू और शिक्षाके विषयमे

अनेक आचार्य मुझमे सलाह लेनेकी अपेक्षा रखते है। मुझे नही लगता कि जबसे मै राष्ट्रीय मदिरमे रहा तबसे मैने विद्यार्थियोमे जितनी 'शिक्षा' ली है अुतनी मैने अुन्हे दी होगी।

परन्तु अिस दशासे मै लज्जित नही हू, क्योकि छोटे बालकोसे शिक्षा लेकर ही सच्चा शिक्षक बन सकनेकी मै आशा रखता हू।

३

मै आश्रमसे कार्यालयमे आ रहा था। सामनेसे बारह सालका अेक लडका तेज चालसे चला आ रहा था। लडका मुझे नही जानता था, मै अुसे नही जानता था। अुसने मुझे 'वन्देमातरम्' के स्वागतभरे शब्दोसे नमस्कार किया। अुसकी चाल और आवाज दोनोंमे विनयके साथ तेज दिखाअी दिया।

फिर अुसने पूछा, "आश्रम यहासे कितनी दूर है?"

"दो मील। वहा तुम्हे किससे काम है?"

"मेरे पिता आश्रममे काम करते है, अुन्हे बुलाने जाना है।"

अिस लडकेको 'साहित्य, सगीत और कला' कितने आते होगे, यह मै नही जानता। परंतु मुझे अुसकी चालमे, अुसकी आवाजमे और अुसकी विनयमे 'शिक्षा' के लक्षण साफ दिखाअी दिये।

'साबरमती', १९२३

२

शिक्षित और अशिक्षित

१

पिछले साल आश्रमसे विद्यापीठके रास्ते जाते हुअे मुझे चने-मुरमुरे बेचनेवाला अेक मुसलमान बूढा रोज मिलता था। धीरे धीरे सलामसे आगे बढकर हम बातचीत करने लगे। अुसकी बातो परसे मेने जाना कि कुछ वर्ष पहले वह मिलमे काम करता था और बहुत अच्छा कमाता था, बादमे बीमारीके कारण कमजोर हो जानेसे मिलमे काम करने लायक नही रहा। "सेठने मुझसे कहा कि 'मिया, अब तुम दफ्तरमे आकर चपरासीकी जगह बैठे रहना; तुम मरोगे तब तक मै तुम्हे वेतन दूगा।' परतु अिस प्रकार सेठकी मेहरबानी पर जीना मुझे पसन्द नही आया। हम दो आदमी है और मेरी सासके साथ शामिलके शामिल और अलगके अलग रहते है। मेरी सास कहती, 'बेटा, अब मै तुझे नौकरी करने नही जाने दूगी। तू शहरसे चने-मुरमुरे लाकर सामने वाडजके नाके पर बैठा कर। खुदा शाम तक जितना देगा अुससे हम काम चला लेगे।' अिसलिअे मै सुबह शहरसे यहा आता हू और दोपहरको नदी पार करके सासके घर खाना खा आता हूं। शामको सासके घर टोकरी रख देता हू और घर चला जाता हू। अिस प्रकार मेरा धधा चल रहा है। शाम तक चार-छ· आने मिल जाते है, और अितना मिल जाय तो क्यो किसीके गुलाम बनकर रहे?"

मुझे अैसा नही लगता था कि अिस आदमीने लिखना-पढना सीखा होगा। शायद थोडा-बहुत आता भी होगा। परतु यह नही कहा जायगा कि वह और अुसकी सास शिक्षित नही थे।

२

अिससे भिन्न प्रकारका अनुभव मुझे थोडे महीने पहले अेक राष्ट्रीय शालाके विद्यार्थियोने कराया। वहाके विद्यार्थियोने अपनी परे-

शानियोकी कुछ बाते मुझसे कही। वे यदि सच हो (और शिक्षक कहते है कि वे सच है) तो वे हमारे कौटुम्बिक जीवनकी अधोगतिका करुणाजनक दर्शन कराती है।

अिस शालामे अग्रेजीकी पाचवी कक्षा तक पढाअी होती है। अधिकाश विद्यार्थी बारहसे पद्रह वर्षकी आयुके और खासे सुखी घरोके है। तुलसीदासजी कहते है कि रघुकुलकी कीर्ति 'प्राण जाय पर वचन न जाअी' की टेक पर बनी थी, अिस गावके पाटीदार कुलोके बारेमे मुझे विद्यार्थियोने कहा कि वे अपनी कीर्ति बडी हवेली और विवाहमे किये जानेवाले भारी खर्च पर मानते है। पास रुपया हो और दूसरे सद्व्ययके मार्ग सूझने जितनी सस्कारिता न आअी हो तो अुसका अुपयोग अैसे कामोमे करनेकी वृत्ति होना स्वाभाविक है। अमीरीके साथ अैसा बडप्पन प्राप्त करनेकी अिच्छा तो आम तौर पर रहेगी ही; अिसलिअे यह परिस्थिति कितनी ही अनिष्ट हो तो भी अुसे स्वीकार करना ही पडेगा।

परतु विद्यार्थियोने कहा, "अिसलिअे हमारे माता-पिता हमसे कहते है कि 'अब पढना बन्द करो, अफ्रीका जाओ और रुपया कमाकर लाओ। पढना ही हो तो सरकारी स्कूलमे पढो जिससे अच्छी नौकरी मिले।' हमारे विवाह अभीसे कर डाले है। माता-पिता कहते है कि, 'अिस विवाहमे अितना खर्च हो गया, तुम्हारी पढाअी पर अितना ख़र्च होता है। यह पैसा ला दो नही तो घरसे बाहर निकलो।'"

अपने पुत्रको कोअी माता-पिता अैसे वचन कह सकते है, अिस पर मुझे विश्वास नही हुआ। किसीने पिताके लिअे 'आशा रखनेवाला बाप' कहा है, परतु माताके लिअे तो वह भी 'आशा न रखनेवाली मा' कहता है। परतु अिन विद्यार्थियोमे से कुछने अपनी माताओ पर भी अैसी भाषाका आक्षेप किया। मै अिसे न मान सका और अिसलिअे मैने यही समझ लिया कि अिन विद्यार्थियोमे अैसी कोअी अुद्धतता रही होगी जिसे सहन न किया जा सके। और अैसा समझकर मैने

अुनसे मातृ-भक्ति और पितृ-भक्तिके बारेमे बात की। मैंने यह भी कहा कि कभी कभी क्रोधके आवेशमे अैसे शब्द माता-पिता बोल देते है, परतु ये अुनके हृदयके स्थिर भाव नही होते। अिसलिअे अैसे शब्दोसे यह कल्पना न कर ली जाय कि 'मा-बाप पैसेके ही सगे है।'

मैंने अुस समय विद्यार्थियोसे कहा था और अब भी मै मानता हू कि यह सच नही हो सकता कि लडके माता-पिताको कमाअी लाकर दे तो ही अुन्हे प्यारे लगते है। यदि लडके राम या श्रवण जैसे माता-पिताकी सेवा करनेवाले, विनयी और आज्ञाकारी हो, तो वे निर्धन होने अथवा गरीबी और अीमानदारीसे गृहस्थी चलानेका आग्रह रखनेके कारण माता-पिताको बुरे लगे, यह हो ही नही सकता। मेरा तो पिताके बारेमे भी यही अनुभव है और माताके लिअे तो ससारके अधिकतर लोग अिसकी साक्षी देगे कि माताके लिअे पुत्रका प्रेम अितना बधनकारक होता है कि वह तगी भुगतकर भी पुत्रसे दूर रहना नही चाहती।

परतु अिन विद्यार्थियोने ब्योरेवार अपने घरकी जो स्थिति मेरे सामने रखी, अुस परसे अैसा माननेके लिअे कुछ कारण जरूर है कि हमारे कुटुम्बोका वातावरण अितनी अधोगतिको पहुच गया है कि अुसमे माता-पिताके मनमे रुपया ही मुख्य बन जाता है — पैसे मिलनेकी दृष्टिसे ही बालकोका पालन-पोषण किया जाता है, अुनके विवाह किये जाते हैं, अुन्हे पढाया जाता है।

कोअी रम्य स्वप्न देखनेके बाद सत्य जागृतिमे आने पर मन बहुत बार यह माननेको तैयार नही होता कि वह स्वप्न झूठा ही था; अिसी तरह यह मानते हुअे हृदयको आघात लगता है कि माता-पिताके बारेमे मेरी कल्पना गलत और विद्यार्थियोकी बताअी हुअी अुपरोक्त स्थिति सच्ची ही होगी। मै मानता हू कि अिसका दूसरा पहलू भी जरूर होगा। फिर भी बालकोके प्रति माता-पिताकी शुद्ध बुद्धिके बारेमें दससे पद्रह वर्षके बच्चोके हृदयमे शका अुठ सकती है, यह चीज ही मुझे

आघात पहुचानेवाली लगती है, और वह —— पढाअी कितनी ही हुअी हो, परतु —— शिक्षाका अभाव सूचित करनेवाली लगती है।

अिसके विपरीत पचास वर्षके बूढेको 'बेटा' कहनेवाली आर स्वतत्रता खोनेकी अपेक्षा थोडी कमाअीसे सतोष माननेवाली सासकी भावना कितनी स्वाभिमानी और प्रेमपूर्ण जान पडती है!

३

तीसरा अनुभव भी आश्रम और विद्यापीठके बीचके रास्तेका ही है। अिस रास्तेसे आनेवाले अेक गावके बालक वाडजकी राष्ट्रीय शालामे पढते थे। जाते आते दोनो समय रोज हमारा मिलाप होता था और अेक बार मै राष्ट्रीय शाला देख आया था अिसलिअे हमारे बीच काफी मित्रता हो गअी थी। दूरसे मुझे सामने आता देखकर वे 'जय जय, किशोरलालभाअी, जय जय किशोरलालभाअी' कहकर दौडते हुअे आते, मुझसे घडी निकलवाकर कितने बजे है, यह जाननेका लगभग रोजका कार्यक्रम रहता; कभी कभी वे चनोकी माग करते। शालामे छुट्टी होती तब वे रास्तेके पेड पर चढ जाते। मुझे पेड परसे देखकर डालीके पीछे छिप जाते और पुकार कर ढुढवानेकी कोशिश करते। हमारी यह मित्रता कअी महीनो तक चली।

परतु बादमे अुसमे अेक विघ्न आ गया। कुछ मास पूर्व वाडजमें अत्यज-प्रवेश होनेसे अिन लडकोने राष्ट्रीय शालाका त्याग कर दिया और वे मुझसे नाराज हो गये। सभव है अुनका यह भी खयाल हो कि वाडजमे अंत्यजोको लानेमे मेरा हाथ है। अब वे सरकारी शालामे जाते है।

अब भी हम आमने-सामने मिलते है। परतु अब मुझे 'जय जय' कैसे किया जा सकता है? मैने अेक बार अुनसे कहा, "तुम सरकारी शालामें भले ही जाओ, परतु अिससे हमारे बाते करनेमे क्या हर्ज है?" परतु यह मित्रता अब अुनके लिअे स्वप्नवत् हो गअी। पहले तो वे

मेरी आखोसे अपनी आखे न मिलने देते। मुझे दाअी ओर चलता देखकर वे बाअी ओर हो जाते और मुह अुल्टी दिशामे कर लेते। अेक विद्यार्थी, जो पहले मुझे देखते ही हस देता था, अब हसी न आने देनेके लिअे मुह बन्द करके दूसरी दिशामे गरदन मोड़ कर चलने लगा।

मित्रताके स्थान पर तिरस्कारकी वृत्ति अुत्पन्न हो जाय तो वह कितनी तेजीसे बढती है, यह मुझे अब देखनेको मिलने लगा।

धीरे धीरे अिन लडकोकी वृत्तिमे फर्क पडने लगा। अब वे रास्ते या आखोकी दिशा नही बदलते, परतु आखे बडी करके और छाती निकालकर सामने आते है और मेरे दोनो ओरसे पासमे होकर चले जाते है।

अेक दिन मुझे छोडकर बहुत आगे चले जानेके बाद मैंने अुन्हें 'केसला, केसला' चिल्लाते सुना। अुस दिन अिसका मर्म मै न समझ सका; परतु बादमे अनुभव बढता गया। अब अुन्हे अैसा नही लगता कि अिस तरह चिल्लानेके लिअे अुन्हे बहुत दूर जाना चाहिये। अब मेरे मुह पर ही कभी-कभी अेकाध गालीके साथ यह आवाज लगाअी जाती है। मै जानता हू कि यह आदत लबे समय तक टिकेगी नही। थोडे दिन बाद अुनको अिस चिल्लाहटमे आजका-सा रस नही मालूम होगा। और जब चित्तको खीचनेवाला कोअी और विषय मिल जायगा तब वे मुझे भूल जायगे। परतु यह वस्तु विचार करने जैसी है।

वे लडके सातसे दस वर्षके बीचके है। अुनकी पढाअी राष्ट्रीय शालामे या सरकारी शालामे नियमित रूपमे होती रही है। फिर भी अुन्हे सच्ची शिक्षा देनेका घरमे या पाठशालाओमे प्रयत्न हुआ हो, अैसा मुझे नही लगता। अुनकी स्वाभाविक मधुरताका भी हनन होने लगा है, यह स्थिति कितनी दयाजनक है?

नवजीवन, केळवणी अक, २६–७–'२५

३

ज्ञान या अज्ञान ?

१

मै जब छोटा था तब अेक वृद्ध मारवाडी महिला मेरे घर पर हमेशा आती थी। सम्राट् जॉर्ज जब राज्याभिषेकके लिअे भारतमे आनेवाले थे, तब अुस प्रसग पर अुत्सव मनानेके लिअे जैसे स्थान स्थान पर धूमधाम मची हुअी थी वैसे हमारे गावमे भी हो रही थी। अेक दिन अुस महिलाने मुझसे पूछा, "भाअी, यह क्या हो रहा है ? लोग कहते है कि राजा आनेवाला है, राजा आनेवाला है। कौनसा राजा आनेवाला है ?"

मैने समझाया, "हमारे देशके बादशाह जॉर्जका राज्याभिषेक होनेवाला है ?"

महिलाने कहा, "परतु हमारे देशमे तो रानीका राज है न ?"

मै चकित हो गया। रानीकी मृत्यु हो गअी, अेक दशक तक राज्य करके अेडवर्डकी मृत्यु हो गअी और अब अुसके लडकेकी राज्य करनेकी बारी आ गअी, यह सब अिस महिलाको आज भी जानना बाकी है। वॉशिग्टन अिर्विंगको अमरीकामे बीस वर्षमे हुअे फेरबदलकी विलक्षणता दिखानेके लिअे रिप वान विकलको बीस साल तक सुला देना पडा। परतु हमारे देशमे अिस महिलाको तो सारे गावके अेक-अेक देवालयके दर्शनोंका नियम पालन करनेके लिअे रोज सुबह छ मे बारह बजे तक घूमते रहना पडता है, तो भी अुसे बारह वर्षमे रानीके मरनेकी बात मालूम हुअी।

मैने रानी और अेडवर्डके मरनेकी बात कही। अुसने कहा · "तो हमारे देशसे अब त्रियाराज चला गया और पुरुषका राज हो गया !"

बेचारी अिस महिलाको अैसा लगता था कि अितने बडे मुल्क पर अेक स्त्री राज करे, यह कैसी अद्‌भुत बात है ! अुस स्त्रीका कितना बल और पराक्रम होगा !

ब्रिटिश राज्यकी रचना अिस प्रकारकी है कि अुसमे राजगद्दी पर बैठनेवाला पुरुष हो या स्त्री दोनो अेकसे ही नि सत्व है और अुस गद्दी पर बैठनेके लिअे किसी बल-पराक्रमकी जरूरत नही होती, अेक विशेष वशमे विशेष प्रकारसे होनेवाले जन्मकी ही जरूरत पड़ती है, राजगद्दी पर बैठनेवाला राज्य करनेवाला नही होता, परतु राज्य करनेवाला दूसरा ही होता है — यह सब अिस महिलाको किस तरह समझाया जा सकता है, अिस बारेमे मै विचारमे पड गया।

फिर भी, वह महिला कोअी अज्ञानमे सतोष माननेवाली नही थी। भरी जवानीमे वैधव्य प्राप्त हो जानेके बादसे लकडीके सहारे चलनेकी शक्ति रही तब तक बहूको बाधा होती तब लडकेको खाना बनाकर खिलाने और व्रत न हो अुस दिन अेक बार पेटको भाडा देनेके सिवाय बाकीका सारा समय अुसका साधुओकी खोजमे जाता। गावमे कोअी नये बैरागी आये है, यह सुनते ही वह सबसे पहले अुनकी पूछताछ कर आती। मारवाडी होने पर भी नियमित रूपमे 'वचनामृत' सुन-सुन कर अुसकी भाषा अुसे आने लगी थी और 'भक्त-चिन्तामणि' तथा 'निर्गुणदासजीकी बाते' सुनकर श्री सहजानद स्वामीका चरित्र अुसकी दृष्टिके सामने स्पष्ट तैरता रहता था। भजन तो अुसे अनेक आते थे और वृद्धावस्थामे भी नये नये सीख लेती थी। अेक तरफ अुसे अपने पातिव्रत पर यह विश्वास था कि अुस पर कुदृष्टि रखनेवालेका भला हो ही नही सकता और दूसरी तरफ रक्षा करनेवालेके रूपमे अीश्वर पर अुसकी दृढ श्रद्धा थी। और वह अिसका वर्णन भी करती थी कि जवानीके दिनोमे अुसे तग करने आनेवालोके क्या हाल हुअे थे।

ये सब ज्ञान प्राप्त करनेकी जाग्रत पिपासाकी निशानिया थी, परतु काफी विवेक-शक्ति न होनेसे यह ज्ञान-पिपासा फलीभूत नही हो सकती थी और जिज्ञासा होते हुअे भी अज्ञान ही रहता था। क्योकि आप अुसके सामने चिढानेके लिअे भी 'छी' करके खडे रहे या लबा बास लेकर अुसके सामने जाय तो वह वहीकी वही दस मिनट बैठ

जाती, कोअी अच्छा चिकना या रगीन पत्थर दे दे तो वह अुसके देवताओके सग्रहमे जुड जाता और फिर रोज अुसकी भावपूर्वक सेवा होती। अिस प्रकार ताम्रपात्र भरकर देवता अुसके पास जमा हो गये थे। गावके अेक अेक शिवालय और वैष्णव मदिरके सिवाय हमारे जैसोके यहा जो खानगी देवसेवा होती वहा भी अुसकी बारिया बधी हुअी थी। गरज यह कि अुसमे श्रद्धा थी, पवित्रताका शौर्य था, परतु विवेकके अभावमे अनन्यता — दृढ धारणा — नही आ पाती थी, और अिसलिअे व्यवहारज्ञान या अध्यात्मज्ञानमे से अेक भी बढ नही पाता था।

२

दूसरी बात ताजी ही है। दासबाबूकी मृत्युको दो चार दिन हुअे थे। मै आश्रमसे कार्यालय जा रहा था। रास्तेमे अेक रबारी (अहीर) से भेट हुअी। बहुत दूरसे अकेले ही चल कर आनेकी अुकताहटके कारण या बातूनी स्वभावका होनेके कारण, कोअी निमित्त मिलते ही (जो मुझे याद नही) अुसने मुझसे बाते करना शुरू कर दिया।

अुसने कही सुना था कि अहमदाबादके किसी मदिरके वैरागियों और मुसलमानोमे झगडा हो रहा है। वह मुझसे अिसके बारेमे पूछ-ताछ करने लगा। परतु अिस विषयमे मै अुससे भी अधिक अज्ञानी निकला। मुझे अिस विषयकी कुछ भी जानकारी नही थी। अिसलिअे झगडेकी जड वगैरा अुमीने मुझे समझाअी और अब यह जाननेको अुत्सुक था कि आगे मामला कहा तक पहुचा है। अुसे आश्चर्य हुआ कि मै शहरके अितने नजदीक रहते हुअे भी कुछ नही जानता, परतु जो सत्य था अुसे मै कैसे बदल सकता था!

परतु अुसे तो किसी न किसी तरह बातें करके रास्ता काटना था, अिसलिअे विषय बदला और मुझसे परिचित विषय पर पूछना शुरू किया।

"गाधी महात्मा यही है?"

"नही, बगाल गये है।"

"गाधी महात्मा क्या बगालके है? वे बगालमे क्यो रहते है?"

मैंने कहा, "नही, भाअी, वे तो यहीके है। काठियावाडके है। कामके लिअे बगाल गये है।"

"यहाके है? किस गावके?"

"पोरबदरके।"

"यह बगाल तो वही है न जो गोपीचद राजाका मुल्क कहलाता है?"

"हा, वही।"

गोपीचद राजाके कारण ही अुसे बगालका परिचय था। अुसने गोपीचद राजपाट त्यागकर विरागी बने अुसका भजन गाना शुरू किया। अुसका आरभ मे भूल गया हू। परतु बीच-बीचमे अुसकी आलोचनाअे चलती रहती थी।

"कितना बडा राजा था! देखिये न

'अीडा, पिगळा, सुखमणी नारी,
बारसे परणी ने तेरसे कुवारी!'

अितना बडा वैभव ओर माया छोडते अुसे जरा भी देर लगी? और हमने छोटासा अेक गधा पाला हो तो अुसकी माया भी हम नही छोड सकते!"

---

* अिस गुजराती लोकभजनका शब्दार्थ है— (गोपीचन्द राजाकी) अीडा, पिगळा और सुखमणी वगैरा सैकडो स्त्रिया थी; अुसके रनवासमे १२ सौ विवाहित और १३ सौ कुवारी लडकिया थी। अिस भजनमे हठयोग सम्बन्धी अिडा, पिगला, सुषुम्ना वगैरा नाडियोका रूप बिगड कर अूपर जैसा हो गया है और नाडीका नारी बनकर अुपरोक्त अीडा, पिगळा वगैरा राजाकी सैकडो स्त्रियोकी कल्पना विचित्र ढगसे घुस गअी है।

मै सोचने लगा कि अिस आदमीको ज्ञानी कहू या अज्ञानी। अेक तरफ गोपीचद राजा और अुस रबारीके बीच कितनी ही शताब्दिया बीत गअी। अिस बीच बगालमे कितनी ही अुथल-पुथल हो गअी, अिसकी अुसे जरा भी गध नही। अुसके मस्तिष्कमे तो गोपीचद राजाके साथ ही बगालका साहचर्य है! दूसरी तरफ हमारे पढे-लिखोने गोपीचदका नाम सुना होगा, कदाचित् अुसका नाटक देखकर थोडी-बहुत अुसकी कथा जानी होगी, परतु बगाल या अुज्जैनका अुन्हे कुछ भी खयाल नही होगा। अिस रबारीके लिअे गोपीचद और बीसवी सदीके बीचका बगालका अितिहास नीदमे चला गया, हममे से बहुतोको जैसे नीदके बीच-बीचमे सपने आ जाते है, वैसे ही अितिहासमे पठानो या अकबर या शूजाके सबधमे बगालकी कुछ कुछ झाकी हो जाती है, परतु अैसा लगता है मानो बगालके अितिहासका प्रभात सिराजुद्दौला या क्लाअिवसे ही हुआ है।

गोपीचदका धार्मिक जीवनके साथ कोअी सबध न हुआ होता, तो अिस भाअीको गोपीचदका नाम सुननेका प्रसग न आता। धार्मिक जीवनके साथ जुड जानेके कारण गोपीचद सबधी जानकारी भक्तो द्वारा भजनोके जरिये अनजानसे अनजान हिन्दू तक पहुच गअी, परतु अन्य ज्ञानके अभावमे अुस जानकारीका भी शुद्ध स्वरूपमे पहुचना कितना कठिन है यह 'अीडा, पिगळा सुखमणी नारी, बारसे परणी ने तेरसे कुवारी' की विचित्र रूपमे भ्रष्ट हुअी साखी दिखा देती है। यह भ्रष्टता केवल भाषाकी भ्रष्टता नही, परतु पदार्थकी पहचान सबंधी भ्रष्टता भी है।

दूसरी ओर अिस रबारीको गोपीचन्द राजा अैसा लगता है मानो कलकी ही दुनियाका विषय हो, परन्तु हमारी आजकी दुनियाके विषय — दासबाबू — का अुसके जीवनमे क्या स्थान है? दासबाबू मर गये, यह कहनेसे अुस पर क्या असर होगा? जब वह यही नही जानता कि अैसा कोअी आदमी था तब अुसके मर जानेकी बात जानकर अुस पर

भला क्या असर होगा ? और अुनसे भी अधिक प्रसिद्ध महात्मा गाधी है, जिनका नाम तो अुसने किसी प्रकार सुन लिया है, परतु गोपीचदके बंगाली होनेका अुसे जितना पता है अुतना गाधीके गुजराती या बगाली होनेका अुसे पता नही है!

दासबाबूके स्मारकका चदा अिकट्ठा करनेके लिअे गाव-गाव जाकर हम किस मुहसे अुस स्मारकके लिअे रुपया देनेको अैसे रबारीसे कह सकते है, यह विचार सहज ही मनमे अुठता है।

बडेसे बडे नेताओ द्वारा निकलनेवाले सभी अखबारो, पुस्तको और भाषणोका यह ज्ञान देनेमे कितना हाथ है? तमाम राजनैतिक हलचलोमे जनताका यह वर्ग किस प्रकार दिलचस्पी ले सकता है? जनताका अधिकतर भाग क्या अिस रबारीकी कोटिका ही नही है? और अिस जनताकी जागृतिके बिना क्या देशकी गाडी आगे बढेगी?

तीसरी तरफ यह भी सोचने लायक बात है कि अिस रबारीके जीवनको अितना सस्कारी बनानेमे किसका हाथ रहा है। गोपीचद विरागीका अितिहास अुसने किसकी शालामे पढा ? गधे जितनी माया भी हम नही छोड सकते, यह आत्म-परीक्षण अुसे कहासे मिला? हमारे देशके अज्ञानीसे अज्ञानी भागमे भी जो सस्कारिताके कुछ बीज है, अुन्हे डालनेवाला कौनसा वर्ग है? यह कार्य करनेवालोकी जीवन-पद्धति कौनसी है? हमारे देशकी परिस्थिति ही अिस प्रकारकी है कि अपने कल्याणके लिअे व्याकुल भक्त ही अुस जनता तक पहुच सकते है; दूसरोका कल्याण करनेका भार लेकर बाहर निकले हुअे लोग अुसे स्पर्श नही कर सकते।

यह सच है कि अुन भक्तोमे भी सकुचित दृष्टि रह जाती है। अिसके कारणो पर स्वतत्र रूपमे विचार करना चाहिये। फिर भी देशको सस्कृत करनेमे अुनका जो बडा हाथ है और अुनके जीवनमे देशको सस्कृत बनानेकी जो शक्ति है, अुसका अुचित मूल्य स्वीकार किये बिना काम नही चलेगा।

अैसी है हमारी जनता। अेक तरफ अुसमे कुछ सुसस्कारोके बीज है, दूसरी ओर अज्ञानकी गहरी पैठी हुअी घास है। हमारी वर्तमान शिक्षा अुस अज्ञानकी घासको खोद निकालनेका कुछ प्रयत्न कर रही है, परन्तु जिस प्रकार हमारे जैसे केवल पढे-लिखे आदमी खेतमे निदाअी करने लगे तो बाजरे और घासका भेद न जान सकनेके कारण घासके साथ बाजरा भी अुखाड डालेगे, वैसे ही हमारी मौजूदा शिक्षा अक्सर अुस अज्ञानके साथ सुसस्कारके बीजोको भी खोद डालती है। नीदनेवालेको अुपयोगी वनस्पति और जगली वनस्पतिके बीचका भेद जानना चाहिये, वैसे ही हमे भी अपनी जनताके अज्ञान और अुसके सुसस्कार दोनोको पहचानना चाहिये।

नवजीवन, केळवणी अक, २७–९–'२५

४

परिचारक भील

जेलके अस्पतालमे मुझे बार-बार जाना पडा था। अस्पतालके परिचारकोमे अेक भील कैदी था। वह बिलकुल जड और स्मरण-शक्ति-हीन लगता था। अुमर पचासके लगभग होगी। मुझ पर बहुत ममता रखता था। मुझे बार-बार यह विचार आता था कि मै अुसे क्या सिखाअू। दो चार बार मैने अुसे लिखना सीखनेको ललचाया, परतु अिस बारेमे वह निराश हो गया था। वह जवाब देता था, "मुझे बहुत लोगोने बार-बार पढनेके लिअे कहा, परतु अुनकी बात मुझे जची नही। अब आप कहते है अिसलिअे अैसा लगता है कि पढ लेता तो अच्छा होता, परतु अब बूढा हो गया, अब मुझे नही आयेगा।" मैने अुसे स्वय पढानेका वचन दिया और यह विश्वास दिलाया कि जरूर आ जायगा, परतु अुसे विश्वास नही हुआ।

सारे जीवनमे अुसने दो भजन जितना साहित्य भी नही सीखा था। हिन्दू-धर्मके किसी देवी-देवता अथवा राम-कृष्णके नाम भी नही जानता था, तब अवतारोके चरित्र तो कहासे जानता? मैने सोचा कि पढ नही सकता तो कहानियो और भजनो द्वारा ही अुसे कुछ न कुछ ज्ञान दिया जाय।

काल्पनिक कहानियोके लिअे अपना विरोध अलग रखकर मैने अुसे चिडा-चिडी और पशु-पक्षियोकी कहानिया सुनाना आरभ किया। वह अुमगपूर्वक सुनने जरूर बैठता और अिस तरह हसता मानो अुसे बडा मजा आ रहा हो। परतु अुसकी आखोसे मुझे मालूम हो जाता कि कहानीका अेक अक्षर भी वह नही समझता। मै अुसे पूछता "क्यो भाअी, मै किसकी बात कह गया, बता तो?" तब वह जवाब देता "यह मुझे पता नही चलता। आप बात कहते है सो मै सुनता हू। परतु याद रखना मुझे नही आता।"

म विचारमे पड गया। मुझे लगा कि अिस अुम्रमे अिन तुच्छ बातोमे अुसे मजा नही आता होगा। फिर मैने रामकी कहानी कहना शुरू किया। अेक दिन थोडीसी कही। दूसरे दिन पूछा कि कल शामको क्या बात कही थी। जवाबमे 'शून्य'। मैने फिर शुरूसे वह कहानी कही और तीसरी शामको फिर पूछा। फिर वही शून्य। अुसे यह भी याद न रहता कि मनुष्यकी बात कही थी या जानवरकी!

मै सोचने लगा कि अब क्या किया जाय। अेक दिन मैने अुससे यो ही पूछा. "तुझे तीर-कमान चलाना आता है?" बस; प्रश्न पूछनेकी ही देर थी। जोरसे 'हा' कहकर वह अत्यत अुत्साहमे आ गया। और मुझसे कहने लगा कि वह अैसा बढिया तीरदाज है कि अुडते पक्षियोको भी नीचे गिरा सकता है।

कहानियोका थोडासा मसाला मुझे मिल गया। नाम दिये बिना मै अुसे अब धनुर्विद्याकी विविध कहानिया कहने लगा। दशरथके शब्दवेधकी, अर्जुनके द्रौपदी-स्वयवरकी, द्रोण द्वारा तीरसे कुअेंमें से बाहर

निकाली हुआी गिल्ली वगैराकी कहानिया सुनाआी। अब अुसकी स्मृति जाग्रत हो गआी। ये सब बाते वह अच्छी तरह याद रख सकने लगा। (नामोको छोडकर — नाम तो वह किसीका भी याद नही रख सकता था। आठ नौ महीने वह हम सबके साथ रहा, परतु अत तक वह चार जनोको भी नामसे पहचानने नही लगा था। वे 'मोटे भाआी' और वे 'गोरे भाआी' अिस प्रकारके वर्णनसे ही वह निर्देश कर सकता था।)

दशरथकी अपेक्षा अर्जुनके बीधे हुअे यत्र-मत्स्य पर वह अधिक मुग्ध हुआ और द्रोण पर तो वह फिदा ही हो गया। "सच्चा बामन, सच्चा बामन! कुअेमे गिरी हुआी गिल्लीको तीरसे अुछाल कर बाहर निकाल लिया! वह सच्चा तीरदाज था!"

अिस परसे मुझे अेक सूचना मिल गआी कि वह कौनसी बाते समझ सकता और याद रख सकता है।

थोडे समय बाद 'यह कैसे सूझा?' नामक रूसी पुस्तक मेरे पास आआी। अिस भीलकी जोडमे अेक दूसरा कैदी भी था। भील जितना जड था, अुतना ही यह चालाक था। लगभग सारी जिन्दगी अुसने जेलमे ही गुजारी थी। मुझे अैसा लगा कि यह बात अुसके अधिक योग्य है, और वह अुसे कहनेका मैने विचार किया। साथमे भील भी बैठता था। मैने यह आशा नही रखी थी कि भील अिसे समझ सकेगा। परन्तु परिणाम मुझे अत्यंत आश्चर्यजनक मालूम हुआ।

मै यथाशक्ति नाम छोड कर ही बाते करता था; कभी कोआी नाम देना ही पड़ता तो अेक भील या दर्जी अैसा साधारण नाम दे देता अथवा रूसीके बजाय कोआी देशी नाम रख देता। कहानी कहा तक पहुची है, यह मुझे भील दूसरे दिन बारीक ब्योरेके साथ कह सुनाता। वह राम-लक्ष्मण अथवा बालकृष्णकी बातें नही समझ सकता था, परन्तु अिस रूसी कहानीके सब पात्रोके अटपटे पराक्रम बारीकीसे याद रख सकता था!

यह कहानी मै पूरी नही कर सका, अिसलिअे अुसका महत्त्वका जो अंतिम भाग था वहा तक नही पहुचा जा सका। परन्तु मैने देख लिया कि राम-लक्ष्मण जैसे पात्रोके साथ अुसका अपने जीवनमे कोअी सबध नही बधा था, अिसलिअे अुनकी बातोमे अुसकी स्मृति मद थी, परन्तु झूठे नोट बनानेवाले, दीवारमे सेध लगानेवाले, घोडे चुरानेवाले लोगोको वह अच्छी तरह पहचानता था, अिसलिअे अुनकी कहानिया अुसे आसानीसे याद रहती थी।

मैंने यह सोचकर अिसका वर्णन किया है कि मानसशास्त्री और शिक्षक अिस अनुभवसे बहुत कुछ निष्कर्ष निकाल सकेगे। अिस पर अधिक विवेचन करनेका काम मै अुन्हीको सौपता हू।

'श्री दक्षिणामूर्ति', अगस्त १९३१

५

सभ्यताके आधार-स्तंभ

पढे-लिखे लोगोको शारीरिक परिश्रम करनेमे शर्म आती है। आठ-दस घटे दफ्तरमे बैठना, नकले करना, टाअिप करना, हिसाब मिलाना, प्रूफ देखना, पुस्तके लिखना वगैरा अूचे माने हुअे काम करनेमे वे अितने नही अुकताते, जितने खाना बनाना, कपडे अथवा बर्तन धोना, झाडू लगाना, पीसना, कूटना, कातना, नालिया धोना, पाखाने साफ करना वगैरा कामोसे अुकता जाते है। अिसी तरह यदि अुन्हे कभी छोटासा भी बोझा अुठाकर चलना पडे तो बडी शर्म आती है। तब बढअी, लुहार, राज वगैरा कारीगरोका काम तो वे थोड़ा भी कैसे सीख सकते है? और यदि छोटासा भी अैसा काम निकल आये तो अुन्हे हाथ जोडकर खडे रहना पडता है। कलम, स्याही और कागजसे चिपटे रहकर काम करनेमे कितने ही

घटोका श्रम क्यो न करना पडे और अुससे अर्थप्राप्ति कितनी ही कम क्यो न हो, तो भी अुसमे प्रतिष्ठा मानी जाती है। परन्तु मेहनत-मजदूरीका काम, भले अुसमे स्नायुओ पर जोर पडता हो, शरीरको लाभ होता हो और रुपया भी अधिक मिलता हो, अप्रतिष्ठित माना जाता है।

अमुक काम अूचा अथवा प्रतिष्ठायुक्त है और अमुक नीचा अथवा प्रतिष्ठाहीन है, यह खयाल कभी कभी लोकसेवकोमे भी पाया जाता है। हरिजन वगैरा पिछडी हुअी जातियोमे विद्याप्रचारकी अपनी प्रवृत्तियोके साथ हम कभी कभी अिन विचारोका भी प्रचार कर देते है। 'विद्या पढो जिससे तुम अच्छी नौकरी पा सकोगे, पाठशालामे शिक्षक बन सकोगे और तुम्हे घरनौकर, मजदूर, कारीगर और भगीका काम नही करना पडेगा।' अिस प्रकारकी बाते कभी कभी दलितोके सेवक नासमझीमे कह डालते है। अिसी तरह स्त्रियोसे भी कहा जाता है कि 'आज तक तुमने खाना बनाया, बर्तन मले, बच्चोको सभाला; अब चूल्हा छोडो, चक्की बन्द कर दो, बच्चोको छात्रालयमे भेज दो, और बाहर निकलकर समाजके काममे लगो।' अिस प्रकारकी बातोसे यह मालूम हो जाता है कि अैसे कामोके बारेमे लोकसेवकोके कैसे खयाल है।

मेरी समझसे अैसे विचार हम खुद अपने लिअे रखे यह भी दुर्भाग्य है। तब जिन लोगोकी हम सेवा करना चाहते है, अुनके दिमागमे अैसे विचार अुत्पन्न करना अुनकी सेवा नही परन्तु कुसेवा ही है। विचार करने पर मालूम होगा कि दफ्तरोके कामके बिना मानव समाजके लिअे सभ्य जीवन बिताना असभव नही है। परन्तु भोजन, बच्चोका पालन आदि गृहिणी-कर्म, झाडना, लीपना, माजना, धोना आदि भृत्यकर्म और अनाज अुगाना, मकान बनाना, कपडे बुनना वगैरा किसान और कारीगरके कर्मके बिना सभ्य जीवन जीना असभव है। अितिहाससे भी जान पडता है कि अनेक जातिया अैसी

हो गअी है, जिनमे कारकुनी या लेखनवृत्ति न होते हुअे भी वे सस्कृत और समृद्ध थी। अितना ही नही, परन्तु यह भी कहा जा सकता है कि कारकुनी – कार्यालयविद्या – कायस्थविद्या तो हाल ही मे अुत्पन्न हुअी है। मनुष्य समाजका काम हजारो वर्ष तक अुसके बिना ही चलता रहा। और आज भी यह माननेका कोअी कारण नही कि यदि सारी कार्यालय-व्यवस्था अेकदम बन्द कर दी जाय तो मनुष्य-समाज पर भूकम्प जैसी कोअी बडी आफत टूट पडेगी।

अिंग्लैण्डमे वकील, डॉक्टर तथा अध्यापकके धंधोको माननीय धधे कहनेका रिवाज है। अिन धधोको साधारण लोगोने यह विशेषण नही दिया है, परन्तु अिन धधोवालोने स्वय ही अपने धधोके लिअे यह विशेषण लगा लिया है। अिसी प्रकार हम दफ्तरका काम करनेवालोने कारकुनीके कामको प्रतिष्ठित धधा मान लिया है।

वास्तवमे देखा जाय तो मानव-सभ्यताकी स्थिति और वृद्धिके लिअे मुशीगिरीकी अितनी जरूरत नही, जितनी गृहिणी-कर्म, भृत्य-कर्म, कृषिकर्म तथा कारीगरके कामकी है। भले यह कर्म स्त्री करे या पुरुष, शिक्षित लोग करे अथवा अशिक्षित, हाथसे करे या यत्रसे, प्रेम और धर्मबुद्धिसे करे अथवा रुपयेके लिअे करे। जिस समाजमे धान्य पैदा करना, पीसना, कूटना, खाना बनाना, कपडे बुनना और सीना, घर, कपडे और बर्तन साफ रखना, मुहल्ला, नगर और स्मशान स्वच्छ रखना अित्यादि काम सुव्यवस्थित ढगसे होते रहनेका प्रबध न हो, अुस समाजमे कितने ही विद्वान तर्कशास्त्री, प्रतिभावान कवि, प्रखर गणितशास्त्री, सूक्ष्म ज्योतिषशास्त्री, कुशल मत्री और कार्यालय-व्यवस्था करनेमे प्रवीण प्रबधक हो तो भी अुसकी सभ्यता टिक नही सकती। अिन कार्योके लिअे यत्रका अधिकसे अधिक अुपयोग हो तो भी अिन यत्रोके लिअे किसी मनुष्यके हाथकी जरूरत रहेगी ही। और जिन हाथोसे जमीन जोतने, बीज बोने,

धान्य अिकट्ठा करने, अुसे कूटने, पीसने और पकाने, बच्चोको पालने, मकान बनाने, कपडा बुनने, नालियां, पाखाने और मुहल्ले साफ करने वगैराके यत्र चलेगे, वे हाथ सभ्यताके आधार-स्तभ होगे, न कि वे हाथ जिनसे केवल कागज पर अक्षर लिखे जाते रहेगे। यह सच है कि पढे-लिखे लोगोने मानव-सभ्यताको बढानेमे और सुशोभित करनेमे काफी भाग लिया है और अुसकी ख्याति भी बढाअी है। परन्तु साथ ही यह न भूलना चाहिये कि दीवारकी शोभा रगसे बढती है तो भी दीवार ही रगका आश्रय है और दीवारके बिना रगको स्थान ही नही मिल सकता। अिसी तरह सभ्यताके आधार-स्तभ प्रतिष्ठित माने हुअे धधे नही, परन्तु पढी या बेपढी गृहिणियो, भृत्यो, कृषको और कारीगरोके धधे है। अिन धधोको अप्रतिष्ठित कहना अथवा समझना या अुनके प्रति अनादर रखना, अुन्हे करनेमे शर्म आना और अुन्हे अच्छी तरह करनेके अुपाय खोजनेमे रस न लेना विद्वत्ताका लक्षण भले ही हो परन्तु सभ्यताका नही; और लोकसेवकोके अनेक कर्तव्योमे अेक यह भी समझना चाहिये कि वे स्वय अिन कामोमे भाग लेकर अिनकी प्रतिष्ठा बढाये और अुन्हे करनेकी पद्धतियोमे सशोधन करे। गाधीजी जिसे शरीरश्रम (श्रमयज्ञ, ब्रेड लेबर) का सिद्धान्त कहते है, वह यही है।

हरिजनबन्धु, ३–२–'३५

६

धन्धेका निश्चय

१

अपने गुजरातके दौरेमे सरकारी या राष्ट्रीय, हरिजन अथवा हरिजनेतर, जिन जिन शालाओ या छात्रालयोमे मुझे बोलनेका मौका मिला, वहा मै जो अेक प्रश्न सबसे पूछता था वह यह है 'तुम बडे होकर कौनसा धधा करके अपना गुजारा करोगे, यह तुमने तय कर लिया है?' बेशक, कोअी दर्जनभर तरुण या लडके मुश्किलसे अैसे मिले, जिन्होने अपना भावी धधा निश्चित कर रखा था। कॉलेजके विद्यार्थी भी अधिकतर यह नही जानते थे कि वे ग्रेज्युअेट होनेके बाद निश्चित रूपसे कौनसा धधा करेगे। विनय-मदिरोके विद्यार्थियोमे से अधिकाशको यह सवाल सुनकर अुलटा आश्चर्य हुआ। अैसा प्रश्न विनय-मदिरकी भूमिकामे पूछा ही कैसे जा सकता है? कुमार-मदिरके विद्यार्थियोको जब मैने यह प्रश्न पूछा तब तो शिक्षकोको भी आश्चर्य हुआ। और जब मैने बाल-मन्दिरोके शिक्षकोके सामने यह बात रखी कि प्रत्येक बालकको बडा होकर जीविकाके लिअे क्या धन्धा करना है, अिसका निश्चय आपके बालकोसे बाल-मदिरमे ही करा लीजिये, तब अुन्हे कैसा लगा होगा, यह मै नही जानता।

प्रवाससे लौटनेके बाद अेक शिक्षककी तरफसे मिले पत्रमे से नीचेका भाग अुद्धृत करता हू·

> "आप छुटपनसे ही अिस बातका विचार करनेकी सलाह देते है कि बालकको बडा होकर किस धंधेमे जाना है। परन्तु क्या छोटी अुम्रमे यह तय करने लायक समझ बालकोमे आ जाती है? जिस अुम्रमे दुनिया देखी न हो, अपनी अभिरुचि

या कुशलताका पता न हो, अुस अुम्रमे अैसा प्रश्न निश्चित ही कैसे हो सकता है? मुझे तो लगता है कि विनीत होने तक बालक साधारण शिक्षा ले, हाथ-पैर हिलाना सीखे, भिन्न भिन्न धधोके बारेमे जाने, और बादमे वे अपना मार्ग निश्चित करे। अुद्योगोमे बढअी, लुहार और दरजीका काम थोडा-थोडा सीखा हो तो अुस परसे वे अपना मार्ग निश्चित कर सकते हैं। अिसमे विचारदोष या दृष्टिदोष हो तो बताअियेगा और अपनी दृष्टि अधिक समझाअियेगा।"

अिस मागको पूरा करनेका प्रयत्न करता हू।

हमारे देशमे शिक्षाका अग्रेजी काल आरभ हुआ अुससे पहले अिस बारेमे परेशानी पैदा नही होती थी कि लडका बडा होकर क्या धधा करेगा। जैसे हिन्दू हो तो चोटी रखनी ही चाहिये और मुसलमान हो तो सुन्नत करानी ही चाहिये, यह चीज शका अुठाये बिना बालक स्वीकार कर लेता था, वैसे ही वह नि शक होकर यह मान लेता था कि बडा होने पर अुसे माता-पिताका धधा ही करना है। वेदान्तका अध्ययन करे, भक्त बने, कविता रचे, बडी बडी हवेलिया बनवाये, पुल खडे करे, रास्ते बनाये, चित्र खीचे, अपने धधेमे कम प्रवीण हो या ज्यादा, थोडा यशस्वी हो या बहुत, फिर भी दरजीका लडका जियेगा तब तक सियेगा तो जरूर और बनियेका बेटा किसी प्रकारके पैतृक व्यापार-व्यवसायमे ही रहेगा। अिस प्रकार रोजगार-धन्धेके मामलेमे किसी प्रकारकी अनिश्चितता नही थी। गाधीजीकी भाषामे कहे तो 'वर्णव्यवस्था कायम थी'।

शिक्षाके अग्रेजी कालमे यह स्थिति बदल गअी। अिसका कारण कुछ हद तक अग्रेजी राज्य द्वारा अुत्पन्न की हुअी शिक्षा-प्रणाली है, कुछ हद तक अग्रेजी राज्य द्वारा निर्माण किये हुअे नये धधे है, और कुछ हद तक यत्रयुगके कारण जगत्के अुद्योग-धधो और आर्थिक व्यवहारोमे हुअी भारी क्रान्ति है।

अग्रेजी कालसे पहलेकी शिक्षामे परम्परागत धधोकी शिक्षाकी व्यवस्था जरूर होगी, परन्तु सभव है व्यवस्थित ढगसे साधारण शिक्षा देनेकी कोअी ठीक योजना न हो। यह अेक दोष था। यह दोष अग्रेजी राज्यको खटका। अुसे राज्यके अलग-अलग विभाग चलानेके लिअे जिन जिन लोगोकी जरूरत थी — नौकरीमे या स्वतत्र धधेवालोके रूपमे — अुन्हे साधारण शिक्षाके अभावमे जुटानेमे कठिना-अिया मालूम हुअी। अिसलिअे अुसने जो शिक्षा-प्रणाली तैयार की, वह पहले केवल साधारण शिक्षा देनेवाली और बादमे विभागोका धधा सिखानेवाली ही तैयार की। साधारण शिक्षाका अभाव हमारे प्राचीन जीवनका दोष था, और यह दोष अग्रेजो द्वारा खडी की गअी शिक्षा-सस्थाओमे पढे हुओ और अुनमे न पढे हुओके बीचका भेद दिखाअी देने पर लोगोके ध्यानमे आ गया। अिसलिअे अिस शिक्षाके प्रति लोगोमे दिनोदिन आकर्षण बढता गया। यहा तक कि अिस शिक्षाके अन्य दोषोकी ओर जब लोकनायकोका ध्यान आकर्षित हुआ और वे राष्ट्रीय शिक्षाकी योजनाअे सोचने लगे, तब भी अिसकी चिन्ता कभी दूर नही हुअी कि सामान्य शिक्षामे कोअी कमी न आने पाये। अुल्टे, अैसी योजनाये सोची गअी कि सरकारी शिक्षाकी कमी विशेष प्रकारकी सामान्य शिक्षासे ही पूरी की जाय। अग्रेजीके बजाय मातृभाषाको शिक्षाका माध्यम बनाना, हिन्दीकी राष्ट्रभाषाके रूपमे स्थापना करना, अितिहासका सशोधन करके अुसे अिस ढगसे सिखाना कि वह राष्ट्रीय भावनाका पोषक बने, मातृभाषाका विकास करना, और थोडे वर्षोमे अधिक पढाअी कराना — आदि आदि राष्ट्रीय शिक्षाके ध्येय बने। अिस सरकारी और गैरसरकारी शिक्षाका सादा नाम 'साधारण शिक्षा' है। अिसका रोचक नाम है 'सस्कारिताकी शिक्षा'।

परन्तु जितने समय तक बालक या किशोर साधारण शिक्षा पाता हो अुतने समयमे अुसे अपने पैतृक धधे या जीविका देनेवाले किसी

अन्य धधेकी शिक्षा किस तरह मिले, असका विचार करना किसीको नही सूझा था। दोष तो धधोकी शिक्षामे भी आ गया था। अेक या अनेक कारणोसे धधे नष्ट होते जा रहे थे, कलाअे नाशको प्राप्त हो रही थी, और जनतामे अज्ञान बढता जा रहा था। असमे भी प्रवाह सामान्य शिक्षाकी ओर ही मुडा। असलिअे धधोका जो थोडा-बहुत ज्ञान परम्परासे चला आ रहा था, असे भी लोग भूलने लगे, और कुछ तो बिलकुल स्मृतिका विषय ही बनकर रह गया। परिणाम यह हुआ कि आज हम यह मानने लगे है कि बीस वर्षकी अुम्रसे पहले धधा तय करना सभव ही नही है। जीवनमे बीस वर्ष —— कमसे कम पद्रह वर्ष तो जरूर —— सामान्य शिक्षा पानेके लिअे होने चाहिये। नतीजा यह हुआ कि बाप किसान होगा और अुसके लडकोमे से अेक वकील, अेक डॉक्टर, अेक अिजीनियर, अेक व्यापारी, अेक आबकारीका दारोगा, अेक रसायनशास्त्री, अेक पाठशालाका शिक्षक और अेक सम्पादक या लेखक होगा, और अुनके लडकोमे भी अैसी ही विविधता हो सकती है।

अिस परिणामको लानेमे सरकारी शिक्षा और राष्ट्रीय शिक्षा, सनातनी और सुधारक, हिन्दू तथा मुसलमान —— सभीने समान रूपमे हाथ बटाया। किसीने रुकावट तो डाली ही नही। वर्ण अर्थात् धधा —— गाधीजीका यह अर्थ स्वीकार कर लिया जाय, तो सबने मिलकर समाजमे पूरी तरह वर्ण-सकरता और अव्यवस्था स्थापित कर दी। जन्मसे किसीका वर्ण तय नही होता; अितना ही नही, आदमी बीस-बाअीस वर्षका हो जाय, कदाचित् अेक-दो बच्चोका बाप हो जाय तो भी वह नही जानता कि अुसका वर्ण क्या है अथवा क्या होगा। जिसे अपना ही वर्ण जाननेकी कठिनाअी हो, वह बालकको भला कौनसे धधेके आनुवशिक संस्कार देगा ?

यह है हमारी आजकी स्थिति। असमे बाहर निकलनेकी जरूरत है। केवल आर्थिक दुर्दशाका हल ढूढनेके लिअे ही नही, यद्यपि यह

कारण भी कोअी तुच्छ या गौण समझने जैसा नही है, परन्तु लोगोके बौद्धिक और चारित्रिक विकासके लिअे भी। मनुष्य बी० अे० और अेम० अे० तक पढाअी करे, पूर्ण तारुण्यमे आ चुका हो, तो भी यह न जान सके कि वह जीवनमे कौनसा धधा कर सकता है, किस धधेके अनुकूल अुसका शरीर और मन है, तो यह कैसी विषम और दया-जनक स्थिति है! यह भी सभव है कि वह कोअी धधा जानता हो, परन्तु आर्थिक परिस्थिति अुसे बेकार रखती हो। परन्तु वह कुछ भी करनेके लिअे तैयार ही न हुआ हो और किसकी तैयारी करनी चाहिये —— यह परेशानी अुसे बीसवे वर्षमे भी रहे, तो यह केवल आर्थिक दुर्भाग्य ही नही, परन्तु मानसिक और नैतिक दुर्भाग्य भी है।

अिसका अेक ही अुपाय है। गाधीजीके शब्दोमे वह यह है कि वर्णव्यवस्थाको हम फिर अुसके शुद्ध स्वरूपमे स्थापित करे। व्यवहारकी भाषामे अिसका अर्थ यह है कि कमसे कम अुम्रमे हम प्रत्येक बालकको यह निश्चय करा दे कि 'तुझे बडा होकर अमुक प्रकारके धधेमे लगना है। तू कुटुम्बकी या अपनी शक्ति, अुमग, परिश्रम और बुद्धिके अनुसार कितनी ही साधारण अर्थात् सस्कारिताकी शिक्षा प्राप्त कर, तुझसे हो सके अितने कला-कौशल सपादन कर, परन्तु यह न भूलना कि तुझे अमुक धधा करना है और अुसके लिअे तुझे छुट-पनसे तैयारी करनी चाहिये। अिस धधेमे तुझे अपना पुरुषार्थ और भाग्य साथ दे तो तू अूचीसे अूची श्रेणी पर चढना; वे साथ न दे तो सामान्य कक्षामे रहना। परन्तु यह निश्चय रखना कि तुझे धधा तो यही करना है।'

यह निश्चय करनेमे माता-पिता तथा शिक्षक बालकके आनुवशिक संस्कार, स्वभाव, जन्मजात सिद्धिया, श्रमप्राप्त सिद्धियां, माता-पिताकी आर्थिक शक्ति वगैराका जरूर विचार कर ले। परन्तु यह विचार करनेमे वर्षोका समय न लगना चाहिये। जितना जल्दी

निश्चय कराया जा सके अुतना अच्छा। और, अिसमे आम तौर पर कौटुम्बिक धधेको पसद करनेका रुख होना चाहिये। अपवादरूपमे ही बालकको माता-पितासे भिन्न प्रकारके धधेमे पडनेका अवसर पैदा होना चाहिये।

२

आजके समयमे भले ही अठारह नही, अठारह सौ प्रकारके धधे हो गये है और अुनमे दिनोदिन वृद्धि होती ही जा रही है। फिर भी अिन सब धधोकी जाच करे तो सभव है सारे धधोको आठ-दस गोत्रोमे बाटा जा सकता है। अुदाहरणार्थ, यह कहा जा सकता है कि बढअी, लुहार, राज, टर्नर, फिटर, रिपेरर, सिविल अिजीनियर, मेकेनिकल अिजीनियर, बिजलीका अिजीनियर, विमानका अिजीनियर, अेजिन बनानेवाला वगैरा लोगोका गोत्र अेक ही है। हम अिन्हे मिस्त्री अथवा कारीगरके रूपमे जानते है। अिनमे से भले ही कोअी आठ आने रोज कमानेवाला हो, और कोअी अस्सी रुपये लानेवाला हो। यहा हम अिसमे जो कुछ अन्याय हो अुसे मिटानेका विचार नही कर रहे है। धधेका प्रारभिक निश्चय करानेका अर्थ है कमसे कम बालकके धंधेके गोत्रका निश्चय कराना। फिर वह ज्यो-ज्यो बडा होता जाय त्यो-त्यो अुसकी शाखाओ और अुपशाखाओका निर्णय होता जायगा।

अिस प्रकार यदि बालक अपने भावी धधेके बारेमे निश्चित हो जाय तो अिससे केवल अुसीको सीधा मार्ग ढूढनेमे सहायता नही होगी, परन्तु हमारी शिक्षा-प्रवृतिया भी अधिक निश्चित मार्ग ग्रहण करेगी। साधारण शिक्षा भी सब मनुष्योके लिअे साधारण सस्कारोकी ही शिक्षा नही होती। अेक खास मर्यादाके बाद वकीलके धधेके लिअे तैयार होनेवालेकी सामान्य शिक्षा अेक प्रकारकी होगी, डॉक्टरके लिअे दूसरी तरहकी होगी, किसानोकी शालामे सामान्य शिक्षाकी अेक दृष्टि होगी और मजदूरोंकी शालामे दूसरी होगी। अिस प्रकार जिस गोत्रके

धधेके लिअे शाला होगी, अुसकी सामान्य शिक्षामे भी बिलकुल आरभमे ही कुछ न कुछ विशेषता होगी।

अर्थात्, अिसमे यह सूचना भी है कि केवल सामान्य शिक्षा — सस्कारिता — की शाला त्रुटिपूर्ण सस्था है। अिसका परिणाम यह हुआ है कि जैसे-जैसे विद्यार्थी बडा होता है वैसे-वैसे कौनसा धधा किया जाय अिसके विषयमे वह केवल सशयात्मा ही नही बनता, बल्कि बाप-दादेका धधा भी बिलकुल भूल जाता है और अुसकी व्यापक शिक्षा अुसके पैतृक धधेके विकासके लिअे अुपयोगी सिद्ध होनेके बजाय अुल्टे अुस धधेके लिअे अुसे अयोग्य ही बनाती है।

धधेका निश्चय और अुसकी शिक्षाकी बचपनसे ही व्यवस्था होनेके सिवाय प्रत्येक बालकके लिअे अेक अितर अुद्योग — अतिरिक्त धधे — की भी जरूरत मानी जायगी। अितर अुद्योगमे दो लक्षण होने चाहिये मुख्य धधेके साथ आरामके समय रुपयेके लिअे नही, परन्तु केवल शौकके तौर पर भी वह प्रिय लगे। आवश्यकता पडने पर, अथवा अैसी अनुकूलता मिल जाने पर, अुसे रोजी देनेवाला भी बनाया जा सके। अिसके अलावा, कभी कभी अेक तीसरा लक्षण भी अुसका हो सकता है। वह यह कि अुसका ज्ञान मुख्य धधेको अलकृत — कलामय — बनानेमे अुपयोगी हो। अिस अितर अुद्योगके चुनावमे बालकके व्यक्तित्वको — अुसके मनको अनुकूल लगनेवाली प्रवृत्ति ढूढनेका पूरा अवकाश रहता है। (अर्थात् मै यहा अितर अुद्योगके तौर पर सहायक अुद्योग अर्थात् कातने-पीजने जैसे अेक धधेके साथ चलनेवाले दूसरे धधेका विचार नही कर रहा हू। अुसका समावेश तो मुख्य अुद्योगमे ही होगा।)

प्रत्येक मनुष्य अपने मनके अनुकूल प्रवृत्तिमे ही रातदिन लगा रह सके और अुसके द्वारा अपनी आजीविका भी कमा सके तो कितना अच्छा हो! परन्तु जिस प्रकारके ससारमे हम रहते है, अुसमे अैसी

अनुकूलता सबको प्राप्त नही होती, बहुत कम लोगोको प्राप्त होती है। अिसलिअे अुदास होने, निराश होने, बडबडाहट करनेसे कुछ नही होगा। अिसीलिअे धर्म मनोनुकूल प्रवृत्तियोका मार्ग नही माना गया, परन्तु कर्तव्यका मार्ग माना गया है। अत मनोनुकूलताकी अपेक्षा कर्तव्यको हम पहला आदर देना सीखे — यह पहला धर्म है। और मनोनुकूल प्रवृत्तियोको आजीविकाके लिअे नही परन्तु शौकके लिअे, निवृत्तिके लिअे, वैयक्तिक विकासके लिअे रखे — यह दूसरा धर्म है।

हरिजनबन्धु, १२–१–'३६

शिक्षाका विकास

दूसरा भाग

सेवाग्राम

१

शिक्षा और श्रम

शिक्षामे अुद्योगका स्थान अवश्य होना चाहिये, अिस बारेमे अब शिक्षाशास्त्रियोमे शायद ही कोअी मतभेद है। परन्तु अुस दिशामे आगे कैसे बढा जाय, यह अभी तक बहुत स्पष्ट नही हुआ है। 'अुद्योग द्वारा शिक्षा' का अेक अर्थ मै यहा पेश करता हू।

मै मानता हू कि प्रत्येक शालाके साथ अुद्योग-विभाग होना चाहिये, और अिसके विपरीत प्रत्येक अुद्योग-सस्थाके साथ अुसमे काम करनेवालोके लिअे शालाकी योजना होनी चाहिये। बालक शालामे पढे और अुसके अुद्योग-विभागमे काम करे और अुद्योग भी सीखे। बडे लोग अुद्योग करे और साथ ही अुद्योग-सस्थाओकी शालाओमे पढे। अिस प्रकार अेकके साथ दूसरी सस्था होनी ही चाहिये।

दुनियामे मनुष्य – जातिके बडे भागको मेहनत-मशक्कतका कठिन जीवन बिताना पडता है, किसी न किसी प्रकारका स्नायु-श्रमवाला अुद्योग करके ही निर्वाह करना पडता है। और जिन्हे अैसा नही करना पडता अुनके भी विकासके लिअे अुनकी स्नायुश्रमवाले अर्थात् मेहनतके काम करनेकी शक्तिका विकास करनेकी जरूरत है। अिसलिअे शालाओकी योजना अिस ढगसे होनी चाहिये कि अुनका पाठ्यक्रम पूरा करनेवाला युवक अथवा युवती मजदूरी (स्नायुश्रम) करनेकी शारीरिक, मानसिक और बौद्धिक योग्यता रखे। बडी अुम्रमे अैसा श्रमपूर्ण अुद्योग न करना पडे और अिसलिअे वह न करे तो कोअी हर्ज नही। परन्तु यह नही होना चाहिये कि जरूरत पडने पर भी अपनी शिक्षाके कारण (बल्कि शिक्षाकी न्यूनताके कारण) वह अैसा अुद्योग करनेके लिअे शरीरसे, मनसे या बुद्धिसे अयोग्य साबित हो।

स्नायुश्रम करानेवाली मजदूरीके तीन वर्ग किये जा सकते है:

१ जिन कामोमे यत्रवत् अेक ही तरहका (monotonous) स्नायुश्रम करना हो, अैसे जड मजदूरीवाले।

२ जिन कामोमे ध्यानपूर्वक, थोडी वहुत तालीमके साथ तथा विविध प्रकारका स्नायुश्रम करना हो, अैसे कारीगरी अथवा कुशल मजदूरीवाले।

३. जिन कामोमे हिसाबके साथ, शास्त्रज्ञानपूर्वक स्नायु-श्रम करना हो, अैसे मिस्त्रीगिरी या अिजीनियरीके।

मनुष्योमे मेहनत-मजदूरीके लिअे जो अरुचि बढ गअी है, अुसके फलस्वरूप जैसे मजदूरीके कामोकी अपेक्षा बैठकके अथवा बुद्धिके कामोके लिअे अधिक मोह होता है, वैसे ही मजदूरीके धधोमे भी अूपरके विभागोमे अेकसे दूसरेकी कीमत ज्यादा समझी जाती है।

परन्तु मानव-जीवनका विचार करने पर जान पडता है कि केवल जड परिश्रमके काम किये बिना जीवन-निर्वाह हो ही नही सकता। अरुचिसे करो, अुमगके साथ करो या कर्तव्यबुद्धिसे हर्ष-शोक-रहित होकर करो, वे करने तो पडते ही हैं। अुल्टे जैसे-जैसे यत्रोमे सुधार होते जा रहे है वैसे-वैसे कुशलतावाले कामोके लिअे भी यत्र बनाये जा रहे है और अुन्हे केवल जड मजदूरीके काम बना डाला जाता है। मतलब यह है कि अुद्योगोकी क्रियाअे यत्रोसे हो या हाथसे, परन्तु जड स्नायुश्रमसे सबको मुक्ति मिलना सभव नही। अिसलिअे अैसे कामोके प्रति मनमे अरुचि बढाना, अुन्हे करनेकी आदत छोड देना तथा अुन्हे करनेमे असमर्थ होना मानव-जीवनको टिकाये रखनेकी अेक अनिवार्य शर्त न पालनेके बराबर है। अिससे मानव-जीवनको सजा मिले बिना रही नही सकती। जो अिससे भागते है अुनका स्नायुविकास कम होता है और अुनमे पीढी दर पीढी अपगता आती जाती है। अिसमे दोनो तरहसे हानि ही होती है। अिस बातका प्रमाण हमारे पीढी दर पीढी बैठकके काम करनेवालो और 'पढे-लिखो' के शरीर देते है।

अिसलिअे मेरी दृष्टिमे अुद्योग द्वारा शिक्षाका अर्थ यह है कि केवल मजदूरीके अेक ही तरहके और श्रमपूर्ण कामोके लिअे शरीरकी शक्ति बढाअी जाय और कायम रखी जाय तथा अैसे कामोके प्रति अरुचि अुत्पन्न करनेवाले सस्कारो और परिस्थितियोको मिटाया जाय। अिसके लिअे विद्यार्थियोको अैसे कामोमे भी लगाना चाहिये, जिनसे अुन्हे जड श्रम करनेकी आदत रहे।

अिसका अर्थ यह नही कि कारीगरी और अिजीनियरीकी शिक्षाको गौण स्थान देना है। अैसा किया जाय तो स्नायुश्रमवाले अुद्योग करनेकी बौद्धिक योग्यता नही बढेगी। और यह भी समाजके लिअे हानिकारक ही होगा।

अिस प्रकार शालाओकी योजना अैसी होनी चाहिये जिसमे विद्यार्थी काफी जड मजदूरी करते हो, कारीगरी सीखते हो और साथ ही पाठ भी पढते हो। अिन सस्थाओके अुच्च पाठ्यक्रममे अिजीनियरीकी शिक्षा आ जायगी।

अैसे अुच्च पाठ्यक्रमके लिअे विशेष शालाओकी अपेक्षा अुद्योग-सस्थाये भिन्न-भिन्न धधोके अधिक सुविधापूर्ण स्थान हो सकती है। यह सिद्धान्तकी अपेक्षा सुविधा और किफायतका विषय है।

परन्तु औद्योगिक शिक्षाके अेक दो आवश्यक लक्षणोके प्रति ध्यान खीचनेकी जरूरत है।

अेक तो 'अुद्योग' को बिलकुल शुरूसे अुसके शुद्ध अर्थमे ही समझना चाहिये। अर्थात् छोटी या बडी जो भी वस्तु बालक बनाये, वह जीवनमे किसी न किसी अुपयोगमे आनेवाली वस्तु हो या अुसका कोअी भाग हो। खिलौना हो तो भी सच्चा खिलौना हो, केवल बनानेवाले बालकके विनोदके लिअे बनाया हुआ न हो। वह जो कुछ बना रहा है अुसका कुछ न कुछ अुपयोग होगा, अिस ज्ञानके साथ बालककी अुसमे प्रवृत्ति और योजना होनी चाहिये। तभी यह कहा जा सकता है कि बालक 'अुद्योग' करता है।

दूसरे, व्यायाम वगैरा शारीरिक शिक्षाको अुद्योगके अेवजमें रखनेसे काम नही चलेगा। व्यायाम, खेलकूद, कवायद वगैराका क्षेत्र और प्रयोजन स्वतत्र है। वे आवश्यक हैं, परन्तु वे औद्योगिक शरीरश्रमकी जगह नही ले सकते।

गाधीजीका सुझाव है कि अिन शालाओका खर्च अुनके विद्यार्थियोके अुद्योगसे ही निकलना चाहिये। अैसा न हो सके तो अन्य दो सूचनाये ये हैं कि विद्यार्थियोका अपना खर्च अुनकी मेहनतसे निकलना चाहिये अथवा कमसे कम शालाओका अुद्योग-विभाग स्वावलबी होना चाहिये। मुझे स्वीकार करना चाहिये कि अैसी अेकाध शर्तका पालन करके ही शालाकी योजना करनेका मार्ग मुझे अभी तक स्पष्ट दिखाअी नही देता। अितना कहा जा सकता है कि वर्तमान जनमानस और गरीबीकी दृष्टिसे विद्यार्थीके श्रमका मेहनताना फीसके खातेमे जमा होनेकी अपेक्षा अुसे कमाअीके रूपमे मिलनेकी व्यवस्था करना अिन तीनोमे अधिक सतोषजनक और परिणामकारक होगा। परन्तु साथ ही जिस विद्याकी कीमत न चुकानी पडती हो वह बहुत सफल नही होती। अिसलिअे मै बीचका मार्ग सुझाता हू विद्यार्थियोकी मजदूरीका अेक हिस्सा फीस माना जाय और बाकीका अुनकी कमाअी।

अुद्योगसे शालाका सारा खर्च निकले या न निकले, यह मुख्य प्रश्न नही है। क्योकि किसी भी हालतमे हमे शिक्षाका प्रचार तो करना ही चाहिये। अिसके लिअे दूसरे विभागोसे अेक अेक पाअी बचानेको हम तैयार होगे। शिक्षाके खर्चके प्रति हमे भविष्यमे आय देनेवाली पूजीकी दृष्टिसे ही देखना चाहिये। अब तक तो केवल पुस्तकीय शिक्षाके खर्चको भी हम अच्छी पूजी समझते आये है। तो फिर औद्योगिक शिक्षाकी तो हमे अधिक अूची कीमत समझनी चाहिये।

असल प्रश्न खर्चका नही, परन्तु कुशल शिक्षाका है। गाधीजी कहते हैं कि कुशलता सिर्फ शिक्षाशास्त्रकी दृष्टिसे ही नही, बल्कि अर्थशास्त्रकी और शरीरशास्त्रकी दृष्टिसे भी होनी चाहिये। अिसमे

दोष निकालने जैसी कोअी बात दिखाअी नही देती। कुछ व्यक्तिगत शालाओको हम आर्थिक दृष्टिसे कुशल न बना सके। फिरभी यदि अिस बात पर हमारा ध्यान रहेगा तो हम कमसे कम नुकसानको कम करनेमे तथा अमुक प्रकारकी शालाओको स्वावलबी बनानेमे भी सफल हो सकेगे। और यह भी न हो तो भी अिससे हमारे साधन बढेगे, घटेगे नही। शिक्षाशास्त्रकी दृष्टिसे निकम्मी शिक्षासे सन्तोष मान लेना गाधीजीके स्वभावमे नही है, और यदि यह मान लिया जाय कि आर्थिक लाभ पर बहुत नजर रखनेसे शिक्षामे निकम्मापन आ रहा है, तो वे अैसे लाभको छोडनेमे डरनेवाले नही है। यह तो हम जानते है कि कत्तिनोकी मजदूरीकी दरोसे असतुष्ट होकर अुसे बढानेमे और अिस तरह महगी खादीको और महगी करके चरखा-सघको जोखिममे डालनेमे अुन्हे कोअी सकोच नही हुआ।

अिसलिअे, अिस मामलेमे हल ढूढनेका मार्ग यह बतानेकी दिशामे हमारी विचारशक्तिको मोडना नही है कि किस प्रकार गाधीजीकी दलीलोका खडन किया जाय और गाधीजी जो चाहते है वह असभव है, परन्तु यह बतानेकी दिशामे अुसे मोडना है कि हम अुनकी कल्पनाको किस प्रकार अधिकसे अधिक सफल कर सकते है।

हरिजनबन्धु, २४–१०–'३७

२
वर्धा-पद्धति *

१. पूज्य गाधीजी द्वारा प्रतिपादित शिक्षाकी योजनाको अिस लेखमे 'वर्धा-पद्धति' कहा गया है।

२ यह योजना बताती है कि अेक बालकको आगे चलकर मनुष्य-परिवारमे अेक जिम्मेवार कुटुम्बीजनका स्थान लेने लायक बनानेके लिअे हम किस प्रकार अहिसाका प्रयोग कर सकते है।

३ अिस योजनाके सबधमे व्यापक रूपसे यह दावा किया गया है कि यदि हमे मानव-समाजमे खूनी और लडाकू वृत्तिके स्थान पर शान्ति-स्थापक वृत्ति निर्माण करनी है, तो आवश्यक फेरफारोके साथ यह तमाम देशोमे और सभी जातियोमे काम दे सकती है। हिन्दुस्तानके लिअे तो आज यही अेक योग्य पद्धति है।

४ अिस पद्धतिका ध्येय यह है कि बच्चेके अन्दर भले-बुरेका खयाल पैदा होते ही अुसे सामाजिक जीवनके कर्तव्योमे भाग लेना शुरू करा देना चाहिये।

५. अिस पद्धतिका मध्यबिन्दु होगा कोअी अुत्पादक पेशा। आम तौर पर हर किस्मकी शिक्षा अिस अुद्योगके जरिये और अिसके साथ गूथ दी जानी चाहिये। अुदाहरणार्थ, अितिहास, भूगोल, गणित, भौतिक तथा सामाजिक शास्त्र अेव साहित्य आदि सब विषयोकी शिक्षा अिस अुद्योगके साथ ग्रथित करके अिसके साथ-साथ दी जाय। अिन विषयोकी अन्य बाते छोडी नही जायगी। पर ग्रथित शिक्षा पर अधिक जोर दिया जायगा।

---

* अिस लेखको पहले 'सेगाव-पद्धति' शीर्षक दिया गया था, परन्तु अब 'वर्धा-पद्धति' नाम रूढ हो जानेसे शीर्षक बदल दिया है।

६. अुद्योग भी शिक्षाका केवल साधन या वाहन नही होगा। बल्कि जिस हद तक वह मानव-जीवनमे अनिवार्यत आवश्यक है, अुस हद तक वह हमारी शिक्षाका साध्य भी होगा। अर्थात् अिस शिक्षाका यह भी अेक ध्येय होगा कि अिसके द्वारा हर तरहके शरीरश्रमके प्रति, चाहे वह भगीका भी काम क्यो न हो, बालकमे आदर-भाव अुत्पन्न हो; और अेक अैसी कर्तव्य-निष्ठा अुत्पन्न हो कि अुसे अपनी रोजी भी अीमानदारीके साथ शरीरश्रम द्वारा ही प्राप्त करनी चाहिये।

७ अिस पद्धतिके अनुसार पढानेवाले शिक्षकका लक्ष्य यह होगा कि विद्यार्थी जो भी अुद्योग सीखे अुसीके जरिये अुसकी तमाम शारीरिक, बौद्धिक, नैतिक तथा आध्यात्मिक शक्तिया प्रकट हो।

८ अिसमे समाज-शास्त्र तथा आरोग्य-शास्त्र केवल शिक्षणवर्गके विषयोके रूपमे ही न पढाये जाय, बल्कि मूक प्राणियो सहित सारे गावकी भिन्न-भिन्न रीतिसे सेवा करनेके लिअे सामाजिक तथा व्यक्तिगत कार्यक्रम बनाकर अुनके द्वारा अिन विषयोकी प्रत्यक्ष शिक्षा दी जाय। अिस नवीन विद्यालयकी हस्ती अेक दीप-स्तभकी तरह हो, जो समाज पर चारो तरफसे सस्कृतिका प्रकाश फैलाता रहे।

९ सक्षेपमे कहे तो "हाथ और ज्ञानेद्रियो द्वारा यह पद्धति व्यक्तिकी बुद्धि और हृदयको सुसस्कृत करे और विद्यालयके जरिये अुसे समाज तथा परमात्मा तक पहुचावे।"

१० शालाके सामुदायिक जीवनमे रहकर रोज तीन या चार घटे तक सह-परिश्रम करना लडके-लडकियोके लिअे आरोग्यदायक और अुत्तम रीतिसे शिक्षाप्रद भी है। "मनुष्य चाहे किसी भी श्रेणीका हो, विज्ञान तथा अुद्योगके विकासके लिअे और सारे समाजके सामूहिक लाभकी दृष्टिसे भी अुसे अैसी शिक्षा मिलनी चाहिये कि वह विज्ञानकी पूरी शिक्षाके साथ-साथ दस्तकारीकी शिक्षाको जोड सके।" (क्रोपाटकिन)

११ मौजूदा शिक्षा-पद्धतिमे तो अधिकाश विद्यार्थी अपनी कॉलेजकी पढाअी खतम कर लेने पर भी यह निश्चय नही कर पाते कि अब आगे वे क्या काम करेगे ? हम अक्सर देखते है कि अैसे बहुतसे लडके और लडकिया, जिनके घरकी स्थिति बहुत ज्यादा खराब नही होती, प्राथमिक शालाओसे माध्यमिक शालाओमे और वहासे कॉलेजोमे भारी खर्च अुठाकर जाते रहते है। अिसका कारण यह नही बताया जा सकता कि वे अिन शाला-कॉलेजोमे सिर्फ अुन शुभ सस्कारोको पाने जाते है, जिनका कि ये सस्थाअे दावा करती है। वास्तवमे तो वे अिसलिअे पढते चले जाते है कि अुन्हे कुछ सूझता ही नही कि अिसके अलावा वे और क्या कर सकते है। आजीविका कमानेके लिअे अुपयुक्त धधेके चुनावकी घडीको जहा तक बन पडता है वे आगे ढकेलते जाते है और अेकके बाद अेक अिम्तिहानोमे बैठते चले जाते है। जिस स्त्री अथवा पुरुषको अपने जीवनके प्रारभिक बीस-पचीस साल अिस तरह निरुद्देश्य बिताने पडते है, अुसके अन्दर दीर्घसूत्रता, सशय-वृत्ति, अनिश्चितता और अपने आप किसी निर्णय पर पहुचनेकी अक्षमता आये बगैर रही नही सकती। वर्धा-पद्धतिका अुद्देश्य यह है कि प्रत्येक बालक या बालिकाको वह जल्दी-से-जल्दी अिस बातका निर्णय करा दे कि अुसे अपने भावी जीवनमे कौनसा व्यवसाय करना होगा, और अुसे किसी अेक धधेकी कम-से-कम अितनी तालीम भी जरूर दे दे, जिससे वह जीवनके योग्य धारण-पोषणके लिअे आवश्यक न्यूनतम कमाअी जरूर कर सके।

१२. साक्षरता — यानी लेखन-वाचन द्वारा अनेक विषयोकी जानकारी तथा तार्किक अथवा अैसी ही अन्य चर्चाओको समझनेकी शक्ति — को वर्धा-पद्धतिमे न तो ज्ञान माना गया है और न ज्ञानका साधन ही। बल्कि, अुसमे तो अिसे ज्ञान अथवा अलकृत अज्ञानको प्रकट करनेकी साकेतिक पद्धतिमात्र माना है। अिन सकेतोका ज्ञान तो तब अुपयोगी और जरूरी हो सकता है, जब ज्ञानकी जडे हरी हो। वर्धा-

पद्धतिका अुद्देश्य यह है कि अिन जडोको हरा-भरा रखा जाय। अिसके साधन है प्रत्यक्ष कार्य, अवलोकन, अनुभव, प्रयोग और सेवा। अिनके बगैर कोरी किताबी पढाअी विद्यार्थीके हृदय और वुद्धिके विकासमे विघ्नरूप सिद्ध होती है और अुसके शरीरको भी विगाडती है।

१३ वर्धा-पद्धतिके अनुसार जो पढाअी होगी अुसमे विद्यार्थीको पढाअीकी बुनियादके रूपमे जो सिखाया जायगा अुसमे नीचे लिखे विषयोका समावेश होना जरूरी है — मातृभाषाका अच्छा ज्ञान, मातृ-भाषाके साहित्यका साधारण परिचय, देशकी राष्ट्रभाषाका व्यावहारिक ज्ञान, गणित, अितिहास, भूगोल, भौतिक तथा सामाजिक शास्त्र, आलेखन, सगीत, कवायद, खेल-व्यायाम वगैरा। अिन विषयोका साधारण ज्ञान और किसी अेक धधेमे अितनी कुशलता जो साधारण शक्तिवाले विद्यार्थीको मामूली कमाअी करनेकी शक्ति दे सके और अगर वह होशियार तथा परिश्रमी भी हो तो अुसे अिस लायक वना दे कि वह साहित्यिक अथवा औद्योगिक क्षेत्रमे अधिक शिक्षा पानेका पात्र बन जाय। अिस 'बुनियादी तालीम' मे नीचे लिखे विषयोका समावेश आवश्यक नही है — अग्रेजी अथवा अैसे तमाम विषय जिनकी साधारणतया व्यवहारमे जरूरत नही होती, अथवा बुद्धिके विकासके लिअे जो अनिवार्यत आवश्यक नही होते या खुद-ब-खुद अपनी शिक्षाको आगे बढानेकी पूर्व तैयारीके रूपमे जिनकी जरूरत नही होती।

१४ 'बुनियादी तालीम' का अध्ययन-क्रम सात वर्षसे कमका नही होना चाहिये। हा, अगर जरूरत हो तो समय बढाया जरूर जा सकता है। अगर आगे लिखे अनुसार शालाअें स्वावलबी हो सकी, और विद्यार्थियोके पालकोको भी अिनसे कुछ लाभ मिल सका, तो बच्चोंको अधिक समय तक पढानेमे अुनके पालकोको कोअी कठिनाअी नही होगी।

१५ वर्धा-पद्धतिके सबधमे राज्यके कुछ कर्तव्य तथा जीवन-वेतनकी कम-से-कम मर्यादाके विषयमें कुछ सिद्धात निश्चित कर लिये गये है। वे नीचे दिये जा रहे है।

१६ जो स्त्री या पुरुष मेहनत करनेके लिअे तैयार हो और जिन्हे सरकार पढनेके लिअे मजबूर करे, सरकारका कर्तव्य है कि अुन्हे वह काम दे और अिस कामके बदलेमे कम-से-कम अितना वेतन तो जरूर दे जिससे कि अुनका ठीक तरहसे निर्वाह हो जाय। जिस सरकारमे अितना करनेकी शक्ति नही है, वह 'राज्य' कहलानेकी पात्रता नही रखती।

१७ अैसा अनुमान लगाया गया है कि आजकलके बाजार भावोके अनुसार हिन्दुस्तानमे योग्य निर्वाहके लिअे पूरा काम करनेवाले आदमीका मेहनताना फी घटा अेक आनेसे कम नही पड़ना चाहिये। 'पूरा काम' यहा अुतना काम समझा जाय, जितना कि (तालीम पाया हुआ) अेक साधारण आदमी घटे भरमे कर सके।

१८ हमारे देशकी वर्तमान शासन-पद्धति तथा समाजकी रचना भी अिस कसौटी पर खरी नही अुतरती। अिसलिअे हमारे देशकी सरकारे 'राज्य' कहलानेकी पात्रता नही रखती। अिस खामीका कारण चाहे विदेशी सत्ता हो या खुद हम ही हो, अुसे दूर करना ही पडेगा। वर्धा-पद्धतिका दावा है कि अगर अुस पर साहसपूर्वक और सच्चे दिलसे अमल किया जाय, तो राज्यमे तथा समाजमे आवश्यक फेरफार करनेके साधन और शक्ति वह हमे देगी।

१९ अिसके लिअे राज्यको कम-से-कम अेक अुद्योगको अपना लेना होगा; वह अुद्योग अैसा हो कि जिसमे वह लगभग असख्य आदमियोंको काम दे सके और फिर भी अुसे खुद घाटा न अुठाना पडे।

२०. हिन्दुस्तानके लिअे तो हाथ-कताअी और हाथ-बुनाअी ही अेक अैसा धधा है। अिसमे कच्चा माल, थोड़ी पूजीसे काम चल

निकलना और अपार मनुष्य-बल आदि वे सारी स्वाभाविक अनुकूलताअे है, जो अुसे देशका खास अुद्योग बना देनेके लिअे आवश्यक हैं। फिर अिसके पीछे लबी परपरा भी तो है। क्योकि सैकडो वर्ष तक हिन्दुस्तानने ही ससारको सूतसे ढका है।

२१ यो तो पहले ही कातनेकी मजदूरी असतोषकारक थी। पर आगे चलकर वह कलोके बने मालकी प्रतिस्पर्धामे और भी अधिक घट गअी। राज्य तथा जनताको चाहिये कि वे अिस प्रतिस्पर्धाको मिटा दे। और जब तक वे अैसा नही कर सकते, खादी-अुद्योगको जिलानेके लिअे प्रतिस्पर्धाकी किसी प्रकारकी परवाह किये बगैर वे कातनेवालेको अितनी मजदूरी देना शुरू कर दे जिससे अुसका अच्छी तरह निर्वाह हो सके।

२२ अिसी तरह सभी प्रकारकी मजदूरीके दर बढानेकी जरूरत है, जिससे कि मजदूरोका धारण-पोषण पूरी तरहसे हो सके। सरकारको चाहिये कि यह करनेकी शक्ति वह प्राप्त करे। जनताका भी यह कर्तव्य है कि सरकारकी अिसमे मदद करे, जिससे कि वह अिस लायक बन जाय।

२३ अूपर बताअी हुअी अल्पतम मजदूरी वडी अुम्रके आदमीके लिअे है। वर्धा-पद्धतिकी शालाके विद्यार्थीके लिअे अुसका दर फी घटा आध आना पडता है।

२४ हम रोजाना कामके तीन घटे मान ले और यह मान ले कि सालमे नौ महीने शाला लगेगी, तो वर्धा-पद्धतिकी शालाकी कुशलताकी कसौटी यह होगी कि सात दर्जे (हर दर्जेमे २५ विद्यार्थी) और लगभग आठ-नौ शिक्षकोवाली शालाकी आय अितनी हो जानी चाहिये कि अुपर्युक्त हिसाबसे अगर मजदूरी आकी जाय, तो अुसमे से शिक्षकोका वेतन निकल आये। शिक्षकका वेतन कम-से-कम २५ रु० मासिक मान लिया गया है। (वह २० रु० मासिकसे कम तो किसी हालतमे न हो।)

२५ विद्यार्थियोकी कार्यशक्ति, साधनो तथा शिक्षा-पद्धतिमे अितने सुधार हो जाने चाहिये कि कुशलताकी अुपर्युक्त कसौटी पर तो कम-से-कम प्रत्येक शाला खरी अुतर जाय। •

२६ अुपर्युक्त दरसे शालाके विद्यार्थीकी मजदूरी आकते हुअे तथा गावोमे खानगी कारीगरोको आज जो मजदूरी मिलती है अुसका विचार करते हुअे यह तो भय नही रहता कि खानगी कारीगरोके मालके साथ शालाओके मालकी प्रतिस्पर्धा होगी। गावोके कारीगरोकी मजदूरीके दरोको अिस सीमा तक आनेमे जरा समय लगेगा और तब तक तो गावोके कारीगरोकी कार्यशक्ति और साधनोमे भी अितने ही सुधार हो चुके होगे। अिसलिअे यहा प्रतिस्पर्धाका भय रखनेकी कोअी जरूरत ही नही है।

२७ फिलहाल तो शालाको अुपर्युक्त मजदूरी चुकानेका आश्वासन सरकारको दे ही देना चाहिये। कम-से-कम चरखा-सघ तथा ग्रामोद्योग-सघ द्वारा मजूर किये गये दर तो जरूर देने चाहिये। और जब तक विद्यार्थीको फी घटा आध आना मजदूरी नही पड जाती, ये सस्थाअे ज्यो-ज्यो अपने यहा मजदूरीके दर बढाती जाय त्यो-त्यो शालाओकी मजदूरीके दर भी बढते जाने चाहिये। अिस पर शायद यह आक्षेप किया जायगा कि यह तो शालाको प्रत्यक्ष रूपसे सहायता करनेकी बात हुअी। और अुससे मौजूदा बाजार-भावोको देखते हुअे सरकार पर बहुत अधिक आर्थिक बोझ पडेगा। मगर कारीगरोकी कार्यशक्ति और साधनोमे भी सुधारके लिअे अितनी गुजाअिश है कि हम यह आशा रख सकते है कि पदार्थोकी कीमते अधिक बढ़ाये बगैर भी पाच वर्षके अदर शाला तथा खानगी (तालीम पाया हुआ) प्रत्येक कारीगर हकके साथ जीवन-वेतनकी न्यूनतम मर्यादा तक पहुचनेकी शक्ति प्राप्त कर लेगे।

२८. यह जो सिद्धान्त कहा गया है कि अूपर बताये अर्थमे प्रत्येक शालाको स्वाश्रयी हो जाना चाहिये, अुसमे केवल आर्थिक

दृष्टि नही है। बल्कि अिसे शालाके औद्योगिक विभागकी कुशलताकी व्यावहारिक कसौटीके रूपमे रखा गया है।

२९ अभी तो खादी-अुद्योग द्वारा 'बुनियादी-तालीम' देनेकी दृष्टिसे वर्धा-पद्धतिका सागोपाग विचार किया गया है। अिससे कोअी यह न समझ ले कि अिसमे हम अन्य अुद्योगोको प्रोत्साहन नही देना चाहते, बल्कि बात यह है कि दूसरे अुद्योगोके सबधमें योजना बनाने और अनुमान निकालनेके लिअे अभी हमारे पास आवश्यक सामग्री नही है।

३० वर्धा-पद्धतिके सिद्धात आवश्यक फेरफारोके साथ अुसके बादकी शिक्षामे भी लागू करने चाहिये। हर प्रकारकी शिक्षामे स्वाश्रयका तो स्थान होना ही चाहिये। अुच्च शिक्षामे सस्थाका खर्च या तो विद्यार्थियोकी मेहनतसे निकल आना चाहिये या अुनकी फीससे। और अगर फीस न देनी पडती हो, तो विद्यार्थी अपना खर्च शालामे या बाहर की गअी मजदूरीसे निकाल ले।

हरिजनसेवक, ४-१२-'३७

३

दो संस्कृतियां *

जो विचार मैं पेश कर रहा हू, अुन्हे आप मेरे ही विचार माने। यह न मान ले कि ये विचार तालीमी सघ या गांधीजीका मत भी अुपस्थित करते ही है।

जो शिक्षा-पद्धति हमारे देशमे प्रचलित है, अुस पर अनेक प्रकारके आक्षेप किये जाते है। ये आक्षेप आजसे नही, परतु वर्षोसे होते रहे है। तो भी वह पद्धति अभी तक कायम है और समझने लायक बात

---

* वर्धामे हिन्दुस्तानी तालीमी सघके तत्त्वावधानमे दिया गया अेक भाषण।

तो यह है कि आक्षेप करनेवाले हम लोगोमे से अधिकतर अुस पद्धतिका सचालन करनेवालोमे से ही पैदा हुअे है तथा आक्षेप करने पर भी अुसी पद्धतिको चलाते रहते है। अिसलिअे हमे विचार करना चाहिये कि हम अिस शिक्षा पर आक्षेप क्यो करते है और अिसके बावजूद अुसीको क्यो चला रहे है।

हम अिस शिक्षा पर आक्षेप करते है, अिसका अर्थ यह है कि अिसके द्वारा हमारी आवश्यकताये अथवा हमारी आकाक्षाअे अथवा दोनो अच्छी तरह पूरी नही होती। हम अिसी शिक्षाको कायम रखते है, अिसका अर्थ यह होता है कि कुछ भी कहे तो भी अिसके द्वारा हमारी कुछ आवश्यकताअे अथवा आकाक्षाअे अथवा दोनो पूरी होती है। अिन दोनो बातोका हमे ध्यान रखना चाहिये और अुनका रहस्य समझना चाहिये।

तो हमे अितना याद रखना चाहिये कि वर्तमान शिक्षा-पद्धति भी अेक विशेष प्रकारकी सस्कृतिकी प्रतिनिधि है। वह सर्वथा विदेशी है, यह कहना ठीक नही। मेरे मतानुसार जिस प्रकारकी शिक्षा-प्रणाली प्राचीन काशी (अथवा आजकी भी सनातनी काशी) और मुसलमान समयमे हमारे देशमे प्रचलित थी, अुससे आजकी शिक्षाका प्रकार भिन्न नही है। यह सही है कि अिन तीनो युगोमे अलग अलग भाषाओको प्रतिष्ठा मिली है। अेक कालमे सस्कृत भाषाकी प्रतिष्ठा सबसे अधिक थी; बादमे फारसीकी, फिर हिन्दुस्तानीकी और फिर अग्रेजी भाषाकी —अिस प्रकार अेकके पश्चात् दूसरीकी प्रतिष्ठा बढी। परतु अुनके द्वारा जिस सस्कृतिको पोषण मिला, वह तो अेक ही रही है। वह सस्कृति अुनकी है, जिन्हे हम भद्र लोग अथवा सफेदपोश लोग मानते है। मेरा तो यह खयाल है कि कमसे कम पिछले अेक हजार वर्षोमे राज्यकी तरफसे बालको और बडोको शिक्षा और सस्कार देनेका जो काम हुआ है, वह केवल सफेदपोश लोगोंमें ही हुआ है।

आर्य —— भद्र —— सम्मानित जातिया हमारे देशमें आरंभसे ही रही है। वे अग्रेजोकी पैदा की हुअी नही है। सभव है कि अग्रेजोने अुनका क्षेत्र कुछ बढा दिया हो, परतु अग्रेजोने अुन्हे पैदा नही किया।

भद्र सस्कृतिका लक्षण मनुष्यकी तर्क और कल्पना-शक्तिका विकास है। सस्कारिताके क्षेत्रमे शास्त्री, पडित, अुलेमा, कवि, ललित कलाकार (जैसे चित्रकार, गायक अित्यादि) लोग अुसके प्रतिनिधि है। दुनिया-दारीके क्षेत्रमे अुसके प्रतिनिधि वकील, वैद्य, डॉक्टर, हकीम, अध्यापक, अुस्ताद और मुशी है। अग्रेजी शिक्षा-पद्धतिका सस्कृतिके विकासकी ओर दुर्लक्ष नही था, हा, अुस पद्धतिने अुसे अपने विचारोका वेश जरूर पहना दिया है। परतु यह तो अिस्लामने भी किया था। दुनियादारीके क्षेत्रमे अग्रेजोने अैसे भी कुछ भद्र धधे निर्माण कर दिये है, जिनमे बुद्धि और परिश्रम दोनोकी आवश्यकता पड़ती है। अिनमे बुद्धि और परिश्रम दोनोके कामोको अलग करके अुनके बौद्धिक विभागोके भद्र धधे बना दिये गये है। अुदाहरणार्थ, अिजीनियरी, खेती वगैरा। अग्रेजोने अपनी सूक्ष्म शास्त्रीय नियम-पालनकी आदतोके जरिये अिन दुनियवी धधोका अधिक विकास भी किया है।

अग्रेजी शिक्षाके विरुद्ध आक्षेप करनेके बावजूद हमारा भद्र वर्ग अुसे छोड नही सकता, अिसके कारण अूपर बताये गये है।

भद्र सस्कृति मनुष्योकी समानताके सिद्धान्त पर खडी नही हुअी है। तात्त्विक दृष्टिसे वह केवल मनुष्योकी नही परतु भूतमात्रकी समानता बतायेगी, परतु दुनियादारीके कामोमें वह केवल अितना ही नही कहती कि मनुष्य मनुष्यके बीच भेद होते है, परंतु यह भी कहती है कि ये भेद रहने ही चाहिये। अिसलिअे वह समाज-व्यवस्थाके लिअे हिसा —— पशुबल —— को अपरिहार्य मानती है और कहती है कि प्रत्येक व्यक्तिको अपनी-अपनी मर्यादामे रखनेके लिअे समाजके राजदण्डको सदा घूमते रहना चाहिये।

यह कहा जा सकता है कि व्यवहारमे भद्र सस्कृति अुतने ही मानव-विभागको मनुष्य-जातिमे गिनती है, जिसे वह भद्र जीवनमे निभाये रखना योग्य अथवा सभव मानती हो। बाकीके लोग सस्कृतिके क्षेत्रसे बाहर और अिसलिअे अुसकी सभ्यताकी व्याख्याके भी बाहर है। वे शूद्र, दास, गुलाम, गिरमिटिया अथवा और कुछ भी हो सकते है, परतु अुसके समाजके नही हो सकते और समाजके सारे अधिकार या सुविधाअे भोगनेके पात्र नही हो सकते।

भद्र सस्कृतिसे अूचे दर्जेकी अेक और सस्कृति भी प्राचीन कालसे जगत्मे चली आअी है। अुसे मै सत अथवा औलिया सस्कृति कहूगा। कभी कभी अिसे पूर्वकी सस्कृति और भद्र सस्कृतिको पश्चिमकी सस्कृति कहा जाता है। परतु मुझे यह परिभाषा अुचित नही जान पडती। फिर यह भी नही है कि भद्र सस्कृति आसुरी है और भद्र सस्कृतिसे बाहर रहनेवाले लोग दैवी सस्कृतिके ही है। दोनो सस्कृतिया दुनियाभरमे प्रचलित है और जैसे भद्र सस्कृतिमे कुछ दैवी अश भी है, वैसे ही अुसके बाहर रहनेवाले लोगोमे आसुरी भाव भी है। फिर भी सारी दुनियाके देशोमे औलियो और सतोकी भी अेक परपरा सदासे चली आअी है। अिन सतोका काम जितना और लोगोमे हुआ है अुतना भद्र लोगोमे नही हुआ। वे या तो भद्रेतरोमे पैदा हुअे है अथवा भद्र वर्गमे जन्म लेने पर भी अुन्होने भद्रेतरोके साथ तादात्म्य साध लिया है। प्राय भद्र लोगोने अुनका विरोध किया है और अुन्हे कष्ट भी दिये है। परतु अन्तमे, कमसे कम, जबानसे अुन्हे स्वीकार किया है और अुनकी स्थूल वन्दना की है। गाधीजी असी परपराके अेक पुरुष है।

भारतकी हो या बाहरकी, सत सभ्यताके तीन सिद्धान्त है: मानवमात्रकी समानता, अहिसा और परिश्रम। भद्र लोग मानते है कि सभ्यताके विकासके लिअे फुरसतका होना बहुत आवश्यक है। सतोका यह मत नही। अुनका कहना यह नही है कि फुरसत अथवा आराम

बिलकुल नही चाहिये। परतु अुनका मत यह है कि संस्कृतिके विकासके लिअे परिश्रम अनिवार्य है और फुरसतमे कुछ न कुछ खराबीका डर भी है।

अिसका कारण समझना कठिन नही। यह सही है कि मनुष्य केवल अन्न पर नही जीता, परतु साथ ही यह भी मानना पडेगा कि मनुष्य अन्नके विषयमे बेपरवाह भी नही रह सकता। अुसे अन्न पैदा करना ही पडता है, फिर भले वह केवल मनुष्यके ही बलसे करे अथवा मनुष्यबलके साथ पशुबल अथवा यत्रबलका भी अुपयोग करे। साथ ही यह भी है कि दूसरे बलोकी मदद ली जाय, तो भी मनुष्यबलको बिलकुल अनावश्यक नही बनाया जा सकता और मनुष्योके बहुत बडे भागको तो अन्न पैदा करनेके लिअे अपना ही बल काममे लेना अनिवार्य होता है। अब हमारा राज्यतत्र पूजीवादी सिद्धान्तो पर बना हुआ हो या साम्यवादके सिद्धान्तो पर, जब तक मनुष्योमे यह सस्कार बढाया जाता है कि परिश्रम अेक महान कष्ट है, अुसकी अनिवार्यता मानव-जातिके लिअे अेक घोर शाप है, तब तक अेक ओर तो मनुष्यसे परिश्रम करानेके लिअे कानून-कायदे — अर्थात् जबर-दस्ती — अनिवार्य हो जायगे और दूसरी ओर मनुष्य हमेशा अुससे बचनेका प्रयत्न करता रहेगा। जब साम्यवादकी यह आदर्श स्थिति आ जाय कि केवल दो ही घटे काम करनेकी जरूरत रहे, तब भी जब तक परिश्रमको आफत समझनेकी हमारी मनोवृत्ति बनी रहेगी तब तक अुतना काम भी टालनेका मनुष्य प्रयत्न करता रहेगा। दूसरे शब्दोमे कहे तो तब तक अुस सस्कृतिको कायम रखनेके लिअे हिसाका आश्रय लेना ही पडेगा।

मतलब यह है कि परिश्रम — यत्रवत् अथवा बुद्धियुक्त दोनो — और अहिसा सगे भाअी-बहन है। परिश्रमके प्रति अरुचि पैदा करेगे तो साथ साथ असमानता और अुसे टिकाये रखनेवाली हिसाकी मनोवृत्ति बढाये बिना काम नही चलेगा। बेशक, मनुष्यको आरामकी

आवश्यकता रहती है। परतु आरामका स्थान अुसके जीवनमे वैसा ही होना चाहिये जैसा हृदयकी क्रियामे होता है। हृदय हर बार जब फूलता और सकुचित होता है, तब अुसके बीचमे अुसे कुछ देर आराम लेना पडता है। परतु विचार कीजिये कि कोअी हृदय अपने आरामके क्षणोका ही आदर करे, फूलने और सकुचित होनेकी क्रियाका तिरस्कार करने लग जाय, तो अुसके मालिककी क्या दशा होगी? अिसी प्रकार जो समाज आरामको जीवनका ध्येय बना ले और परिश्रमकी तरफ अरुचिकी दृष्टिसे ही देखे, अुसे तो अन्तमे मरना ही होगा।

'वर्धा-पद्धति' केवल पढानेका अेक नया ढग ही नही, परतु जीवनकी नअी रचना और नया तत्त्वज्ञान है। यह तत्त्वज्ञान स्वीकार हो तो अुसके अनुसार समाजकी रचना करनेका बुद्धिपूर्वक प्रयत्न करना चाहिये। अिस तत्त्वज्ञान पर निर्मित शालाअे भद्र शालाओसे भिन्न प्रकारकी हो, यह अनिवार्य है। मै कह चुका हू कि भद्र जीवनमे हिसाका स्वीकार किया गया है, अर्थात् युद्धको भी वह जीवनकी अेक आवश्यकता मानता है। अिसलिअे बचपनसे ही वह बालकमे युद्धके लिअे आदर पैदा करता है। वह युद्धके और रणवीरोके यशोगान करता है और अन्य देशोमे तो मनुष्यको मारनेकी शिक्षा सबको अनिवार्य रूपमे प्राप्त करनी पडती है। हमारी दंतकथाअे और अैतिहासिक कथाअे अधिकतर मनुष्यके हाथो हुअी मनुष्यो अथवा पशुओकी हत्याओका वृत्तात ही होती है। धार्मिक कथाअे भी अिससे मुक्त नही होती। और रूपकात्मक कथाअे भी लड़ाअी और मारकाटकी मनोवृत्तिका आश्रय लेती है।

अिस प्रकार, हमे यह भी अेक बात ध्यानमे रखनी पडेगी और अपने साहित्यमे से अत्यत सावधानीपूर्वक अैसी कथाअे निकाल देनी पड़ेगी, भले वे कितनी ही धार्मिक और आकर्षक क्यो न हों। और बाल-मानसके बारेमें हमने जो पूर्वग्रह बना लिये है वे भी छोड देने होंगे। जैसे, यह मान्यता है कि अमुक आयुका बालक अमुक युगके

मनुष्यका प्रतिनिधि है, अिसलिअे अुसे अुस दशाकी पोषक कहानिया कहनी ही चाहिये। सच पूछा जाय तो मनुष्य भले और बुरे भाव तथा सच्चे या झूठे तर्कको प्रगट करनेके तरीकोमे हजारो कदम आगे बढा होगा, फिर भी हजारो वर्षोमे अुन भावो और तर्कोंके प्रकार या मात्रामे शायद ही कोअी फर्क पड़ा है। यह नही कहा जा सकता कि मनुष्योके हृदय और बुद्धिका आगे विकास हुआ है।

अिसका अेक कारण कदाचित् यह हो कि मनुष्यने प्राचीन कालसे आज तक हिसाकी कलाका विकास करनेके लिअे बुद्धिपूर्वक अत्यत परिश्रम किया है। परतु अहिसाकी कलाका विकास करनेके लिअे शायद ही कोअी परिश्रम अुठाया है। बेशक, प्रत्यक्ष जीवनमे तो अहिसाका अुपयोग वह शुरूसे ही करता रहा है। परतु यह अुपयोग अुसने वैसे ही किया है, जैसे कोअी अपढ मजदूर 'लीवर' या 'गुरुत्वाकर्षण' के बलोका सहज अुपयोग करता है, वह अुसका गणित अथवा वैज्ञानिक स्पष्टीकरण नही जानता। जब विज्ञान-शोधकोने अिसके गणित और स्पष्टीकरण समझ लिये, तब अुन्होने अिसके अुपयोगकी सैकडो नअी तरकीबे निकाली। अेक जमाना अैसा था जब वैज्ञानिक मलिन विद्याके अुपासक माने जाते थे। परतु अिन शोधोने विज्ञान सबधी हमारी वृत्ति ही बदल डाली है।

अिसी तरह जब अहिसा-शक्तिका बुद्धि और मानसशास्त्रके साथ सशोधन होगा और तदनुसार मानवजातिके पालन-पोषणकी पद्धतिया ढूढी जायगी, तब कदाचित् हमे यह भी अनुभव होगा कि बाल-मानस जैसा हम मानते है अुससे भिन्न प्रकारका हो सकता है।

हरिजनबंधु, २४, ३१–७–'३८

४

शिक्षा-संबंधी गांधीजीके विचार *

मुझसे आपके सामने गाधीजीके कुछ महत्त्वके विचार प्रगट करनेको कहा गया है। यह काम कठिन तो है, फिर भी अपनी मर्यादाअें ध्यानमें रखकर मैंने अिसे स्वीकार कर लिया है। पहली बात तो यह है कि मै गाधीजीके जो विचार प्रगट करूगा अुनकी जिम्मे-दारी मेरी है, अुनकी नही। और अुनके विचारोको मै अपनी समझके अनुसार आपके सम्मुख रखूगा। मेरी अिस समझमे अुनकी दृष्टिमे भूल भी हो तो ये विचार अुनके नही, परतु मेरे मान लिये जाय। दूसरी बात यह है कि अुनके सब विचारोका विवेचन करना कठिन है। केवल शिक्षा-सबधी कुछ विचार यहा पेश करूगा।

गाधीजीने अनेक बार कहा है कि अुनका कोअी नया तत्त्व-ज्ञान नही है। अुन्होने जो नअी चीज बताअी है वह है दुनियादारीमे पैदा होनेवाली कठिनाअिया और झगडे मिटानेमे मूल सिद्धान्तोका अुपयोग करनेका व्यावहारिक मार्ग। अुनकी मशा भिन्न भिन्न महान सनातन धर्मोका वैयक्तिक नही, परतु सामाजिक जीवनमे सामूहिक रूपमे अुपयोग करनेकी है। तत्त्वज्ञान तो वह है जो प्रत्येक धर्मके महात्माओंने बताया है और जिसके तीन मुख्य अगोका पिछली बार मैंने विवेचन किया था। वे अग है अहिसा, समानता और परिश्रम। जिन्हे अुस तत्त्वज्ञानमे श्रद्धा नही, अुनकी गाधीजीके अन्य विचारो पर भी श्रद्धा नही बैठेगी। अिसलिअे अिन तीनोकी जडमे रहे सिद्धान्तोका विचार करना चाहिये।

---

* वर्धामे हिन्दुस्तानी तालीमी सघके तत्त्वावधानमे दिया हुआ दूसरा भाषण।

कुछ लोग पूछते है कि समानता और परिश्रम तो ठीक है, परन्तु अहिसा किसलिअे? हिसा भी क्यो नही? अिसका अुत्तर गाधीजीके पास अितना ही है कि अीश्वर पर विश्वास। हालमे ही (१८–६–'३८ के) 'हरिजन' मे गाधीजीने अिस विषयके लेख लिखे है। अुनमे वे बताते है

"शान्ति-सेनाके सदस्यका — वह स्त्री हो या पुरुष — अहिसामे अटल विश्वास होना चाहिये। और यह तभी हो सकता है जब अीश्वरमे अुसका सच्चा विश्वास हो। अहिसाको माननेवाला मनुष्य अीश्वरकी कृपा और शान्तिके बिना कुछ नही कर सकता।"

परन्तु प्रश्नकर्ताओको अितनेसे सन्तोष नही होता। वे कहते है कि अीश्वरका अस्तित्व आज शकास्पद है। बडे बडे मनुष्योकी बुद्धिने यह सिद्ध किया है कि अीश्वर नही है, अिसलिअे अुसके साथ यह भी सिद्ध हो जायगा कि अहिसा भी नही है।

यहा फिरसे भद्र सस्कृति और सत सस्कृतिके बीचका अन्तर समझनेकी जरूरत है। पिछली बार मैंने कहा था कि भद्र सस्कृतिमे तर्क और कल्पना-शक्तिका (जिसे हम बुद्धि कहते है) बहुत विकास हुआ है। परन्तु अीश्वरको खोजनेमे अथवा यह निश्चित करनेमे कि अुसका अस्तित्व है या नही, बुद्धि काम नही आती। हमारी पद्धति ही गलत है। जैसे कानसे देख नही सकते और आखसे सुन नही सकते, वैसे ही अीश्वर-सबधी ज्ञान हम केवल बुद्धिसे प्राप्त नही कर सकते। क्योकि यदि अुसे विषय मान लिया जाय तो भी वह हृदयका विषय है। हृदयकी शिक्षा पर आजकल अितना कम ध्यान दिया जाता है कि अधिकाश बुद्धिमान लोग अुसे समझ भी नही सकते। जैसे कान और आख सुनने और देखनेकी आवश्यक और प्रत्यक्ष अिन्द्रिया है, वैसे मन भी हमारी प्रत्यक्ष अिंद्रिय है। हम अपनी भूख-प्यास अपने-आप अनुभव कर सकते है। हममे अुत्पन्न होनेवाले दया, क्रोध, प्रेम आदि भाव हम स्वय अनुभव कर सकते है। अिसमे आख, कान आदि

पचेन्द्रियोकी जरूरत नही पडती। तर्क और कल्पनासे वे समझे नही जा सकते और यदि किसीको अुनका अनुभव कभी हुआ ही न हो तो वर्णन द्वारा अुसे मनकी कल्पना नही कराअी जा सकती। अिमी प्रकार अीश्वर भी अिस सीधे ज्ञानसे समझनेका विपय है। 'सा' और 'रे' अथवा लाल और पीलेका अिन्द्रियोको अनुभव हो जानेके बाद अुस पर कुछ तर्क अथवा वाणीका प्रयोग हो सकता है और जिसे अिस भेदका पता न हो अुसे यह भेद समझानेका तरीका ढूढा जा सकता है। अितनी शर्त जरूर है कि सुननेवालेके आख-कान पूर्ण स्वस्थ होने चाहिये।

अिस प्रकार पहले हृदय यदि तैयार हो तो तर्कयुक्त वाणी द्वारा अुमे थोडा-बहुत समझाया जा सकता है। अिसलिअे सत-सस्कृतिमे बुद्धि और ज्ञानकी अपेक्षा हृदयकी शिक्षा पर अधिक भार दिया जाता है। हमारे बालकोमे प्रेम, आदर, दया, करुणा आदि भाव अुत्पन्न होनेकी और अुन्हे विवेकसे काबूमे रखनेकी शक्ति आनी चाहिये। यह हृदयकी शिक्षा है। जब वह हृदयके अिम साधनको पहचानने लगेगा और अुसका विकाम करेगा तव वह अीश्वरके अस्तित्व अथवा नास्तित्व सबधी विचार सुनने या करनेके योग्य बन सकेगा। अनुभवी मनुष्योका कहना है कि अीश्वरकी खोज करनेका स्थान बुद्धि नही परन्तु हृदय है। फिर भी हम तर्क और कल्पनासे अुसे खोजनेका प्रयत्न करते हं और न मिलने पर निराश होते है।

प्राचीन सतोने अीश्वरके बारेमे जो शब्द काममे लिया है, वही गाधीजी लेते है और वह है 'सत्' या 'हक'। अिसका अर्थ यह है कि सारे जगत्के मूलमे अेक महान सत्य — हकताला — निहित है, और जहासे हमारे तरह तरहके अनुभव और अहवृत्ति —खुदनुमाअी —अुत्पन्न होते है वह हमारा हृदय ही अुसे ढूढनेका स्थान है। अिस हकका सबसे बडा प्रमाण ससारमे चल रहा नियमपालन — हुक्म —का राज्य है। ससारमे दिखाअी देनेवाली सारी भलाअी-बुराअी नियम — हुक्म — से होती है। भलाअी भलाअीके नियमसे और बुराअी बुराअीके

नियमसे। भलाओीके लिअे भलाओीके नियम ढूढने चाहिये और यही ओीश्वरको जाननेका रास्ता है। अुसमे से अहिसा, अपरिग्रह, अस्पृश्यता-निवारण, सेवा आदिसे सम्बन्ध रखनेवाले गाधीजीके सारे व्रत-विचार मिल जाते है।

अिनमे वर्धा-योजनाकी दृष्टिसे अेक महत्त्वका सिद्धान्त है और वह है 'सर्व-धर्म-समभाव' का। अुस योजनामे धार्मिक शिक्षाकी क्या प्रणाली होनी चाहिये? मुझे भय है कि अिस मामलेमे हमारे विचार पूरी तरह स्पष्ट नही है।

अिसमे यह कहा जाता है कि सब धर्म समान है, सब सत्यकी ओर ले जानेवाले है और अिसलिअे सबके प्रति समान आदर रखो। अिस बातको बुद्धि और हृदयसे समझनेमे बडा अन्तर है। दो भाअियोमे झगडा हो और यदि अुसके निपटारेके लिअे वे कचहरीमे जाय, तो न्यायाधीश अपनी न्यायबुद्धिमे जो निर्णय देता है वह अेकपक्षी होता है। परन्तु यदि वही झगडा वे अपनी माके पास ले जाय तो वह हृदयसे जो न्याय प्रदान करेगी वह दूसरी तरहका होगा। अिसी तरह हम यदि बुद्धिसे सब धर्मोकी समानताका सिद्धान्त समझने जाय, तो अेक ओर वेद या गीता, दूसरी ओर बाअिबल और तीसरी ओर कुरानको रखते है। और सब शास्त्रोको समझने बैठ जाते है तथा प्रत्येकका पृथक्करण करने लग जाते है। अेक ओर हम कृष्ण, बुद्ध, ओीसा, मुहम्मद आदिकी अेक-दूसरेके साथ तुलना करने लग जाते है और फिर आश्चर्य प्रगट करते है कि अिन सबको पूरी तरह कैसे समझा जा सकता है; अथवा कोओी बुद्धिशाली मनुष्य कहता है: हा, ठीक है, क्योकि अिनमे से किसीमे भी सार नही है। अथवा समभाव साधनेवाला मनुष्य अेक दिन कृष्णका भजन, दूसरे दिन पैगम्बर मुहम्मदका और तीसरे दिन ओीसाका गुणगान करेगा और अिस प्रकार प्रत्येकको प्रसन्न रखनेका प्रयत्न करेगा। अिससे भले ही सर्व-धर्म-समानता सधती हो, परन्तु अैसा करनेसे भक्तिका फल

नही मिलता। सर्व-धर्म-समानताको समझनेका सच्चा मार्ग हृदयका है। प्रत्येक धर्ममे जो सत या औलिया हो गये है, अुनकी तरफ देखे तो अुनके जीवनकी बाहरी तफसीलोको न देखते हुअे अुनके हृदयकी गहराअीको देखना चाहिये। अैसा करनेसे मालूम पडेगा कि अुन सबका 'हक' और हुक्म (सत्य और नियम) मे समान विश्वास है। सभीके सद्‌गुणोके विकासमे लगभग समानता है। मानो सब अेक ही मा-बापके बेटे है। अेकका जन्म हिन्दुस्तानमे हुआ हो, दूसरेका अरबस्तानमे और तीसरेका युरोपमे तथा चौथेका चीनमे हुआ हो, तब भी सब औश्वरका अेकसा अनुभव और वर्णन करते है और हृदयके सद्‌गुणो और भलाअीके बारेमे अेक ही प्रकारके नियम बनाते है।

मूर्ति, काबा, क्रॉस, स्तूप अथवा लिगकी पूजा की जाय अथवा अेक स्त्रीसे विवाह किया जाय या चारसे, ये बाते तो देशकाल —परिस्थिति—के भेद है। जो सत जिन लोगोमे पैदा हुआ, वहा जिन साधनोका अुसे पता था अुनका अुसने औश्वर-प्राप्तिके लिअे अुपयोग किया। परन्तु ये तो मानवीय नियम है। औश्वरीय नियम अिनसे अधिक गहरे है और अिनके विषयमे सब धर्म और सब औलियो और साधु-सतोका अेक ही मत है। 'सर्व-धर्म-समभाव' को समझनेकी यही कुजी है। अिसलिअे बालकोको सब धर्मोके शास्त्र पढानेकी अितनी जरूरत नही, जितनी सब देशोके औश्वरीय पुरुषोके हृदयोकी गहराअी प्रगट करनेवाले जीवन-चरित्र पढानेकी है। और सब विद्यार्थी अेक दिन हिन्दू पद्धतिसे अुपासना करे, दूसरे दिन अिस्लामी पद्धतिसे और तीसरे दिन औसाअी पद्धतिसे प्रार्थना करे, यह भी जरूरी नही है। जो विद्यार्थी जिस धर्ममे पला हो वह अुसी धर्मके ढग पर प्रार्थना करे। सब धर्मोके चिह्नोका शालामे प्रदर्शन होना चाहिये, अिसे भी मै आवश्यक नही मानता।

शिक्षासे सम्बन्ध रखनेवाला गाधीजीका अेक और विचार वर्ण-व्यवस्थाके बारेमे है। वर्णव्यवस्थाका जो अर्थ सनातनी हिन्दू मानते

है अुसमे और गाधीजीकी कल्पनामे भेद है। 'सनातनी वर्णव्यवस्था' शब्द जाति-व्यवस्था और अूची-नीची श्रेणियोका दूसरा नाम है। गाधीजी वर्णव्यवस्थाका जो अर्थ करते है, वह अलग-अलग धधे करनेवाले लोगोकी सगठित व्यवस्था है। परन्तु दोनो वर्णव्यवस्थाओमे अेक अश समान है। पुरानी वर्णव्यवस्थामे भी यह आवश्यक माना जाता था कि प्रत्येक मनुष्य अपने ही वर्णका धधा करे। गाधीजी भी यही ठीक मानते है कि जहा तक हो सके हरअेक बालक अपने माता-पिताका ही धधा करे। अिससे बचपनसे ही धधेके मामलेमे अेक निश्चित धारणा बन जाती है। हमारी आधुनिक शिक्षामे धधेकी दृष्टिसे वर्ण-व्यवस्था टूट गअी है। अिससे मनुष्य बीस-पचीस वर्षका हो जाता है, तब भी यह निर्णय नही कर पाता कि वह किस धधे द्वारा अपना जीवन-निर्वाह करेगा। वह अेकके बाद अेक परीक्षा पास करता जाता है, परन्तु अुसे यह पता नही होता कि वह किसलिअे अिस प्रकारकी शिक्षा ले रहा है और अपनी परीक्षाअे पास करनेके बाद कौनसे धधेसे अपना निर्वाह करेगा। अुद्योग द्वारा शिक्षा देनेकी योजनामे अेक विचार यह भी होना चाहिये कि जहा तक हो सके बालकको अपने जीवनके धधेके बारेमे स्थिर बुद्धिवाला बनाया जाय।

अन्तमे, शिक्षा-सबधी गाधीजीके कुछ मुख्य विचार सक्षेपमे कह दू :

(१) शिक्षाका ध्येय 'सा विद्या या विमुक्तये' है। अर्थात् विद्या द्वारा बालकको अपनी मुक्ति प्राप्त करनी चाहिये। मुक्ति शब्दके आध्यात्मिक और भौतिक दोनो अर्थ किये जा सकते है।

(२) जब तक अुसकी आजीविकाका प्रश्न हल न हो, तब तक यह ध्येय सिद्ध नही हो सकता। अर्थात् अिस हेतुसे भी बालककी शिक्षा अक्षरज्ञान द्वारा नही परन्तु अुद्योग द्वारा होनी चाहिये।

(३) अुद्योग और शिक्षा-पद्धतिका निश्चय करनेमे हम दस प्रतिशत लोगोको भी नब्बे प्रतिशत लोगोका खयाल रखना चाहिये।

(४) बहुत छोटे बालकोकी शिक्षाका आरभ स्वच्छताकी शिक्षासे होना चाहिये। और अक्षर लिखानेसे पहले चित्रकला (ड्राअिग) सिखाना चाहिये। बालकके हाथमे कलम या पेन रखनेमे देर लगे तो अिसमे बुराअी नही है। परन्तु तब तक अुसका अज्ञान रहना जरूरी नही है। अनेक प्रश्नोका ज्ञान अुसे जबानी देना चाहिये।

(५) शिक्षाका माध्यम स्वभाषा ही होनी चाहिये।

(६) अितिहासमे हमे अधिकतर राजवशोकी अुथल-पुथल, लडाअिया वगैरा ही पढाअी जाती है। मानव-जीवनमे ये चीजे प्लेग या हैजेकी तरह कभी कभी फूट निकलनेवाली बीमारिया है। वे कोअी मनुष्योका नित्य जीवन नही है। अुनका नित्य जीवन तो अहिसात्मक समाज-सगठन द्वारा चलता है और अुसीके द्वारा मनुष्य-जातिने अपना अब तकका विकास किया है। अितिहास द्वारा अिस विकासक्रमका ज्ञान होना चाहिये।

(७) अिसके सिवाय सगीत और कवायद पर गाधीजी बहुत जोर देते है।

हरिजनबन्धु, ३०–१०–’३८

५

‘द्वारा’, ‘और’, ‘की’?

‘अुद्योग **और** शिक्षा’ तथा ‘अुद्योग**की** शिक्षा’ यह भाषा और अिसका अर्थ हम जानते है। परन्तु अव ‘अुद्योग **द्वारा** शिक्षा’ यह नअी भाषा निकाली गअी है।

अिस लेखमे मै अिन तीनोके वीचका भेद बतानेका प्रयत्न करूगा।

जहा साधारण लिखने-पढनेके साथ दो तीन भाषाअे, अितिहास, भूगोल, गणित, विज्ञान आदि पढाया जाता है और अिसके सिवाय कारीगरोके धधोकी भी कुछ न कुछ शिक्षा दी जाती है, अुसे ‘अुद्योग **और** शिक्षा’ कहते है। यह चीज सबकी परिचित होनेसे अिसका विस्तार करनेकी आवश्यकता नही।

जहा भाषाअे, अितिहास, भूगोल आदि कुछ नही पढाया जाता, केवल कारीगरोके या किसी और अेकाध धधेकी शिक्षा दी जाती है और अुस धधेके लिअे गणित, विज्ञान आदिका जितनी आवश्यकता हो अुतना ही ज्ञान दिया जाता है, वह ‘अुद्योग**की** शिक्षा’ है। अिसमे भाषा, अितिहास, भूगोल आदि विषयोकी शिक्षाकी या तो आवश्यकता ही नही मानी जाती अथवा अैसा नियम होता है कि ये सब जो पढ चुके हो वे ही अिन अुद्योगोकी शिक्षा ले। डॉक्टरी, वकालत, अिजीनियरी, हिसाब-किताब, शॉर्टहैण्ड, टाअिप-राअिटिग आदि सब मुशीगिरीके धधोकी शिक्षा अधिकतर अिसी ढगसे होती है। अिसमे जिस अुद्योगके साथ जितने विषयोका सबध हो अुतनोकी ही शिक्षा दी जाती है। यह अुद्योग**की** शिक्षा है। परन्तु वह अिस धंधे द्वारा ही नही दी जाती। फिर भी जीवन-निर्वाहकी दृष्टिसे अुद्योग और धंधेके बीच कुछ समानता होनेसे ‘अुद्योग **द्वारा** शिक्षा’ का अिसमें कुछ अश होता है।

अब अेक और अुदाहरण ले।

सॉलीसिटरका पेशा लीजिये। सॉलीसिटर बननेके लिअे अुम्मीदवारको किसी अन्य सॉलीसिटरके मातहत कुछ वर्ष तक काम करना पडता है। अुसमे सॉलीसिटर अुस तरुणको अपने पास बिठाकर शिक्षककी भाति पाठ नही पढाता, और न अिस पेशेकी शिक्षा देनेवाली कोअी शाला ही होती है। वह तो केवल अुम्मीदवारको दूसरे कारकुनोके साथ अपने दफ्तरके काममे लगा देता है। धीरे धीरे अुम्मीदवार अुस कामको समझने लगता है। जो कानून अुसे सीखना है, वह अुसे स्वय ही पढ लेना होता है। अिस प्रकार काम करते-करते वह दो तीन वर्षमे सॉलीसिटरके धधेके सब रगढग जान लेता है। अिस धधेके लिअे लगभग बी० अे० के बराबर साधारण शिक्षा आवश्यक मानी जाती है। अिसलिअे सॉलीसिटर अैसोको ही अुम्मीदवारके रूपमे ले सकता है।

पहले ही दिनसे अुम्मीदवारसे जो काम कराये जाते है, अुनमे शायद ही कोअी अैसा काम होता है, जो केवल अुसे सिखानेके लिअे ही शुरू किया गया हो। दफ्तरके किसी आवश्यक काममे ही अुसे लगाया जाता है। वह भूल करे तो भले ही अुसका काम रद्द कर दिया जाय, परन्तु अुसके लिअे अैसा काम नही ढूढा जाता जो दफ्तरके लिअे आवश्यक न हो, और केवल अुसे सिखानेके लिअे ही किया जाय। वह फुरसतके समय पुरानी फाअिले ढूढ ढूढ कर देखता अवश्य है, परन्तु यह तो अुसकी सीखनेकी तीव्र अिच्छाकी ही निशानी है।

अिसमे (मोटे अर्थमे) अुद्योगकी शिक्षा है। और वह अुद्योग द्वारा शिक्षा भी है। परन्तु अुसमे साधारण शिक्षा नही है। अिसी तरह वह शिक्षाकी आधारस्वरूप भी नहीं है। जिसकी साधारण शिक्षा हो चुकी हो वही अिसका विद्यार्थी हो सकता है।

अिस प्रकारकी अुद्योग द्वारा शिक्षा बहुत पुराने समयसे तरह तरहके धधोमे दी जाती रही है। जब आजकी तरह सार्वजनिक शालाअे

नही थी, तब बनियोके लडके हिसाब और बहीखाता किस तरह सीखते थे? कायस्थोके लडके चिट्ठीपत्री और दस्तावेज लिखनेका ज्ञान किस प्रकार प्राप्त करते थे? गावके पडितजीके पास आठ या नौ वर्षकी अुम्र तक कुछ न कुछ लिखना-पढना और गणित सीख लेनेके बाद किसी सराफकी दुकान पर या बडे कायस्थके पास बैठकर अुसके काममे सहायता करते-करते वे यह ज्ञान प्राप्त कर लेते थे। मुझे स्वय बहीखातेकी शिक्षा शालामे बहुत कम मिली है। व्यापारी जिस चतुर्थाश या पाअी पद्धतिसे (जैसे ५०।।=।। × ३८। रु०) हिसाब करते है, वह बम्बअीकी जिस शालामे मै पढता था अुसमे नही सिखाअी जाती थी। बहीखाता भी नही सिखाया जाता था। ये चीजे मैने बचपनमे अपने पिता और भाअियोकी दुकान पर फुरसतके समय अुनके काममे मदद करते-करते सीखी थी। अिसके लिअे मुझे कोअी खास हिसाब नही लिखवाये जाते थे; पैसेके लेनदेनमे तथा बहीखाता देखते और लिखते-लिखते अुसके नियम समझमे आ गये थे। जहा नही समझमे आता या भूल हो जाती वहा पिताजी बता देते थे। अिसकी पाठ्यपुस्तके तो जब ये विषय सिखानेका भार मुझ पर राष्ट्रीय पाठशालामे आया तब देखी।

आज भी खेतीका जो ज्ञान परपरासे हमारे लोगोमे है, अुसे करोडो किसान बालक किस तरह सीखते है? गावका जुलाहा, दढअी, लुहार, कुम्हार, मोची, तेली आदि अपने-अपने धधेका ज्ञान किस प्रकार प्राप्त करते है? यह सच है कि हमारी जनता बहुत अज्ञान है और पीछे रह गअी है। फिर भी यह तो हरगिज नही कहा जायगा कि वह बिलकुल मूर्ख है अथवा निरी जगली दशामे है, न अुसमे खेतीका ज्ञान है, न किसी कलाका। अुल्टे अितिहाससे तो यह मालूम होता है कि सार्वजनिक पाठशालाओ द्वारा देशके अिन सब अुद्योगोको सिखानेकी सगठित व्यवस्था न होने पर भी अिन कलाओमे

लोग आजकी अपेक्षा बहुत आगे बढे हुअे थे। अब तो वे अपनी कलाअें अुल्टे भूलने लगे हैं।

बात यह है कि शालाअें न होने पर भी जीवनरूपी पाठशाला तो हमारे देशमें सदा बनी ही रही है, और वह शाला असंगठित रूपमें प्रत्येक धन्धेदारके घरमें ही चलती है। छोटे बच्चे बडोंकी सहायता करते हैं और सहायता करते-करते धंधा सीख लेते हैं। कभी-कभी वे अुम्मीदवार भी रखते हैं। कभी अुन धंधोंवालोंकी पंचायतों या संघोंकी तरफसे भी अपने धंधेकी शिक्षा देनेका कुछ प्रबन्ध होता है।

ये सब अुद्योग द्वारा शिक्षाके दृष्टान्त हैं। अैसे और भी कअी दिये जा सकते हैं। सामान्यतः शालामें न गअी हुअी लडकियां जिस तरह खाना बनाना, शृंगार करना, सीना, लीपना वगैरा घरके काम सीखती हैं, जिस प्रकार बालक स्वभाषा सीखते हैं, अथवा घरमें बोले जानेवाले नित्यपाठके स्तोत्र आदि सीखते हैं, वे शास्त्रीय पद्धतिसे विकसित न होने पर भी अुद्योग (अथवा काम) द्वारा शिक्षाके दृष्टान्त हैं। परन्तु अिन सबमें दोष यह है कि अुनमें केवल अुन-अुन अुद्योगोंकी ही शिक्षा मिलती है। बालकको सब तरहकी शिक्षा नहीं मिलती। जिसे हम विद्या-संस्कारकी शिक्षा कहते हैं, वह अुसमें नहीं मिलती है।

मेरा आशय यह कहनेका नहीं कि विद्या-संस्कार या लिखने-पढनेकी शिक्षाके लिअे हमारे देशमें कोअी प्रबंध ही नहीं था। परन्तु अुसे देनेवाला अेक स्वतंत्र वर्ग था। वह पुराणिक, व्यास, कथाकार, अुपदेशक और साधु आदिका था।

कथाओं और अुपदेशों द्वारा साहित्य, अितिहास, भूगोल, विज्ञान, धर्म, नीति, सदाचार, तत्त्वज्ञान आदिका जो कुछ ज्ञान अुस जमानेके पंडितोंको प्राप्त था, अुसे वे लोगोंमें फैलाते थे। अिससे पढाअी न होने पर भी लोगोंमें साधारण ज्ञानका प्रचार होता था। बेशक, अिन पंडितों, साधुओं, मुल्लाओं और फकीरोंका अपना ही ज्ञान प्राचीन ग्रंथोंमें

मर्यादित था और वे स्वय भी वर्तमान युगके ज्ञानसे अपरिचित थे। अिसलिअे प्राचीन साहित्य, धर्म, नीति, सदाचार, तत्त्वज्ञान आदि विषयोमे अुनके ज्ञानका कुछ महत्त्व था; परन्तु अितिहास, भूगोल और विज्ञानकी विविध शाखाओमे वह अधिकतर बेकार होने लगा था।

अिस प्रकार अुद्योगका और साधारण शिक्षाका, भले वह अशास्त्रीय ही हो, स्वतत्र रूपमे प्रबन्ध था। अुद्योगकी शिक्षाके लिअे पिछली कमसे कम पाच-सात शताब्दियोमे तो शायद ही सार्वजनिक सस्थाअे रही होगी। वह अुद्योगके जरिये ही दी जाती थी। साधारण शिक्षाके लिअे अुपरोक्त पडित और पडितोकी शालाअे तथा कथा-कीर्तनकी सस्थाअे थी। शालाओमे केवल ब्राह्मण-बनिये आदि अूची मानी जानेवाली जातियोके लड़के ही पढते थे। अुनमे से भी कुछ बिलकुल नही पढते थे। परन्तु कथा-कीर्तनका लाभ सभी लोग अुठाते थे; अथवा अलग-अलग जातियोमे अुनके स्वतत्र भक्त पैदा होते थे।

अब हम अिस योजना और वर्धा-योजनाके बीचका फर्क देखे।

अुद्योग **द्वारा** शिक्षाका पुराना ढग व्यक्तिगत और खानगी पद्धतिका है। वह या तो पिता-पुत्र-पद्धति होती है अथवा अुम्मीदवार-पद्धति होती है। जहा अुम्मीदवार-पद्धति है, वहा कभी-कभी कानूनके बधन भी होते है। अिस हद तक वह व्यवस्थित (organised) होती है। परन्तु बडे पैमाने पर देशके सब बालकोके लिअे सार्वजनिक शालाओके रूपमे अैसी कोअी व्यवस्था नही है। वर्धा-योजनाका हेतु जीवनकी अिस स्वाभाविक पद्धतिको बडे पैमाने पर, सार्वजनिक शालाओके रूपमे, सभी बालकोके लिअे लागू करना है।

अिसका अर्थ यह है कि जैसे किसान खेती, बढअी बढअीगिरी, लुहार लुहारी, बनिया दुकानदारी, गृहिणी घर-काम आदि धधोकी शिक्षा अपना धंधा करते-करते अपने बच्चोंको देते है, अुसी प्रकार परन्तु शास्त्रीय पद्धतिसे हमारी सारी आवश्यक शिक्षा देशके समस्त बालकोको सार्वजनिक शालाओ द्वारा देनेका प्रबंध सरकारी तत्रके

जरिये किया जाय। अिसका दूसरा अर्थ यह है कि सरकार दो-चार अैसे अुत्पादक धधे शुरू करे (१) जो बडे पैमाने पर सीधे सरकारकी तरफसे चलाये जा सके, (२) जो बालकोके लायक हो, (३) जिनमे अितनी सामग्री भरनेकी गुजाअिश हो कि वे अुद्योग कराते-कराते अुनके द्वारा साहित्य, अितिहास, भूगोल, विज्ञान आदिकी पर्याप्त जानकारी बालकोको दी जा सके, और (४) जो केवल बालकोके मनोरजन, खेलकूद या शिक्षाके लिअे ही नियोजित कृत्रिम अुद्योग न हो, परन्तु लाखो लोगोके जीवन-निर्वाहके भी साधन माने जा सकनेवाले सच्चे अुद्योग हो। अिससे अुनमे राज्य-व्यवस्था, समाज-व्यवस्था, सपत्ति-व्यवस्था आदि सारी समाज-विद्याओका भी व्यावहारिक ज्ञान देनेकी कुदरती सुविधा मिल जायगी।

अिनमे पहली दो शर्ते सबसे महत्त्वकी है। पहली यह कि सरकारकी सीधी देखरेखमे बडे पैमाने पर चलाये जा सकनेवाले कुछ अुत्पादक धधे ढूढ लिये जाय। अर्थशास्त्रकी भाषामे कहे तो वे अिस देशके जीवन-अुद्योग (key-industries) होने चाहिये। दूसरी शर्त यह है कि वे धन्धे बालकोके लायक होने चाहिये। कितने ही धधे अैसे है जो देशके लिअे जीवनरूप है, परन्तु बालकोके लायक नही है। दूसरी ओर, कुछ धधे अैसे है जो बच्चोके लायक तो है, परन्तु देशके जीवन-धधे नही है।

अिन पिछले धधोकी अुद्योग द्वारा शिक्षाकी शालाये हो सकती है, शर्त यह है कि अुन्हे खानगी सस्थाअे सरकारकी देखरेखमे चलाये। बेशक, अिनकी सख्या बहुत थोडी होगी। परन्तु अुद्योग द्वारा शिक्षाके सिद्धान्तकी दृष्टिसे अिनके लिअे गुजाअिश है। परन्तु सरकारकी दृष्टिसे प्रश्न यह है कि बालकोके लायक राष्ट्रके जीवन-अुद्योग क्या है? स्पष्ट है कि अिनमे पहले नम्बर पर कताअी-बुनाअी ही आती है। सपत्ति-शास्त्रियोके सभी सम्प्रदाय कपडेके धधेको हमारे देशका जीवन-अुद्योग स्वीकार करते है, और अुसे सरकार-नियत्रित (राष्ट्रीय–Nationalized)

बनानेमे भी विश्वास रखते है। बडे और बालक, दोनोंके लिअे वह पूरा धधा हो सकता है। हाथ-कताअी और हाथ-बुनाअीके रूपमे अिसमे बडो और बालकोके बीच स्पर्धाका कोअी प्रश्न पैदा नही होता। साथ ही, कपास अेक अैसी चीज है, जिसने अितिहासमे पहले दर्जेका भाग लिया है। अुसके आसपास खेती, बढअीगिरी, लुहारी, रगाअी, धुलाअी, छपाअी आदि स्वतत्र धधोके अनेक भागोकी योजना की जा सकती है।

अिस प्रकार, अुद्योग **द्वारा** शिक्षाका अर्थ यह है कि सरकार देशके हितके कुछ धधे अिस ढगसे चलाये कि अुनसे देशके लिअे माल भी पैदा हो और बाल-शिक्षाकी व्यवस्था भी हो जाय।

बहुत बडे पैमाने पर प्रबध किया जा सके, अैसा दूसरा कोअी धधा अभी तक ध्यानमे नही आता। खेती, गोपालन आदि देशके जीवन-अुद्योग तो है। परतु अुनमे बालकोका अुपयोग करना असभव नही तो भी कठिन अवश्य है। अिनमे बडे-छोटोकी बराबरी भी नही हो सकती। अिसलिअे यद्यपि अैसी कुछ शालाअे सरकार चला तो सकती है, परतु अुनकी सख्या थोडी ही रहेगी।

अुद्योग **द्वारा** शिक्षाके लिअे अलग अलग धधोकी खोजमे बहुतसे शिक्षाशास्त्री लगे हुअे है। यदि हम समझ ले कि वही धधे शालाओके लिअे अच्छा काम दे सकते है, जिन्हे सरकार-नियत्रित बनाना सभव हो तो खोज आसान होगी। जो अैसे नही बनाये जा सकते, अुनमे स्पर्धाके कारण बालकोकी बेगार, महगाअी और महगाअीके कारण नुकसान वगैराकी कअी अुलझने पैदा होगी। जिन धधोको सरकारी बनाया जा सकता हो, अुनमे मालकी कीमत ठहराना सरकारके हाथमे रहेगा। जो धंधे सबके लिअे खुले हो, अुनमें न्याय और स्पर्धाके प्रश्नोको हल करना कठिन है।

अुद्योग **द्वारा** शिक्षाकी पुरानी पद्धतिमे और अिस नअी योजनामे जो दूसरा भेद है, वह अुपरोक्त बातोसे ध्यानमे आ सकता है। वह

यह है कि हानिका धधा न तो किया जा सकता है और न बालकोसे कराया जा सकता है। यह तत्त्व दोनो पद्धतियोमे समान है। परंतु पुरानी पद्धतिमे धधेका अुद्देश्य लाभ अुठाने (profit-making) का होता है, जब कि वर्धा-योजनामे लाभ अुठानेका हेतु नही हो सकता। यह हेतु छोड कर धधा करनेका अर्थ ही तो धंधेको सरकारी बनाना है।

दोनो पद्धतियोमे अेक और भी भेद है। पुरानी पद्धतिमे गुरु और शिष्य दोनोका यह अुद्देश्य होता है कि अुम्मीदवारको अिस ढगसे तैयार किया जाय (बल्कि वह तैयार हो जाय) कि अुस धधेसे वह अपनी जीविका चला सके। और केवल अितना ही अुसका अुद्देश्य होता है। नअी योजनामे अैसा अुद्देश्य और अितना ही अुद्देश्य नही होता कि विद्यार्थी अुसे सिखाये जानेवाले धधेसे ही अपनी जीविका चलाये। अुसमे कातने-बुनने पर अिस हेतुसे जोर नही दिया जाता कि हिन्दुस्तानको कातने-बुननेवाले लोगोका राष्ट्र बना दिया जाय। परतु अुसका अुद्देश्य यह है कि अुसके द्वारा बालकोके शरीर, अिन्द्रियो, मन और बुद्धिको पूरी तालीम मिले और लडका या लडकी मनचाहा धंधा सीखनेके योग्य बने। परतु साथ ही विद्यार्थीको यह आश्वासन भी दिया जाता है कि यदि वह किसी और धंधेमे सफल न हो सके तो भी कमसे कम कातने-बुननेका धंधा करके तो अपना गुजर चला ही सकेगा। अिसके अलावा यह बात भी है कि किसी अपढकी अपेक्षा ही नही परंतु केवल आजकलकी पाठशालाओमें पढे हुअे विद्यार्थीकी अपेक्षा भी वह किसी कामको ज्यादा अच्छी तरह कर सकेगा, और जिससे दोनो अपरिचित हो अुसे सीख लेनेमे यह अधिक होशियार साबित होगा। यदि यह परिणाम न निकले तो समझना चाहिये कि शिक्षामे कही न कहीं दोष है।

अिस प्रकार, यह केवल साधारण शिक्षा + अुद्योगकी शिक्षा ही नही है और न (अुद्योगके मारफत या स्वतत्र रूपमें) केवल अुद्योगकी शिक्षा है, परंतु अुद्योग **द्वारा** पूरी शिक्षा देनेकी कल्पना है। अैसा हो

सकता है कि अविवेकसे हम अिस कल्पनाको बिगाड दे या हास्यास्पद दिखाअी देनेवाला स्वरूप दे दे। वह अनुभवहीनता अथवा नासमझीका परिणाम होगा। परतु अिससे डरनेकी जरूरत नही। अनुभव अुसे सुधार देगा। मूल वस्तु यह है कि जीवनमे चल रही कुदरती पद्धतिको शास्त्रीय रूप देनेका यह प्रयत्न है और अिस रूपमे यह योजना पहली ही बार शिक्षाशास्त्रियोके सामने रखी गअी है। यह भी याद रखना चाहिये कि अुद्योगके सिवाय जिस कुदरत और समाजके बीच बालक रहता है, अुसे भी शिक्षाका साधन बनाने पर अिसमें जोर दिया गया है।

चरखा-सघने हाथ-कताअी और हाथ-बुनाअीके धधेको देशमे फैलाया है। अिसमे चरखा-सघका हेतु किसी कपनीकी तरह अिस अुद्योगसे नफाखोरी करना नही है, परतु देशमे धन पैदा करनेके साथ अुसे पैदा करनेवालोकी स्थिति सुधारना है। अिसलिअे चरखा-सघको कातने-बुननेवालोका शोषण करनेकी नीति स्वीकार नही है। जो चीज चरखा-सघ बडी अुम्रके लोगोमे कर रहा है वही तालीमी सघको देशके बालकोमे करनी है। बालक छोटे जरूर है, परतु अिसलिअे यह जरूरी नही कि वे घरमे या शालामे बेकमाअू और बेअुपजाअू (unproductive) बन कर बैठे रहे। देशका धन बढानेमे वे भी हाथ बटा सकते है। परतु अिस काममे अुन्हे लगानेमे हमारी दृष्टि स्पष्ट होनी चाहिये। वह यह कि जिस काममे अुन्हे लगाया जाय अुसमे अुन्हे लाभ होना चाहिये। अिसलिअे यह काम धधा चलानेवाली सस्थाओका नही है। अिसे स्वय सरकारको या तालीमी सघ और विद्यापीठ जैसी सस्थाओको करना चाहिये।

'अूर्मि', अक्तूबर १९३८

६

अुद्योग द्वारा शिक्षा

[गूजरात विद्यापीठके शिक्षक-प्रशिक्षण वर्गके सामने दिये हुअे सशोधित भाषण।]

गाधीजीने अुद्योग द्वारा शिक्षाका अेक नया विचार देशके सामने रखा है। अुसे पेश करते समय अुन्होने कहा था कि यह मेरी आखिरी विरासत है और मुझे लगता है कि अिससे अधिक महत्त्वकी भेट मै देशको नही दे सकता। स्पष्ट है कि अैसी प्रस्तावनाके साथ पेश की गअी योजनाका हमे भी गभीरतासे अध्ययन करना चाहिये । हम देखे कि अुनके विचारोमे नया क्या है।

हम दो प्रकारकी शिक्षासे परिचित है। पुस्तकोकी शिक्षा और अुद्योगकी शिक्षा। हम कहते है कि बढअी, लुहार, कुम्हार, रगरेज, अिजीनियर वगैराके काम सीखनेवाले अुद्योगकी शिक्षा ले रहे है। आप सब औद्योगिक शिक्षाके शिक्षक नही है। आपके विद्यार्थीसे कोअी पूछे कि तुम क्या जानते हो, अथवा आपसे पूछे कि आप क्या पढाते है, तो अुत्तर मिलेगा कि दूसरी, चौथी या छठी किताब, फला भूगोल, अमुक अितिहास, गणितका अमुक भाग आदि। अर्थात् कुछ पुस्तकीय विद्याअे वे जानते है और आप अुन्हे पढाते है।

कुछ जगहो पर पुस्तको और अुद्योग दोनोकी शिक्षा दी जाती है। अैसी शालाका विद्यार्थी (अुदाहरणके लिअे) कहेगा कि मै पाचवी किताब पढता हू और अिसके सिवाय बढअीका काम सीखता हू। यह नही कहा जा सकता कि अुसकी पुस्तक-शिक्षाके विषयो और अुद्योगके विषयोके बीच कही संबध आता ही होगा। अुदाहरणार्थ, यह हो सकता है कि अुसे गणितमे अितनी शक्करमे अितनी रेत अथवा अितनी

गैलन शराबमे अितना गैलन पानी मिलानेसे मिश्रणका या नफे-नुकसानका क्या अनुपात आयेगा यह जाच करनी हो। भूगोलमे वह अमरीका महाद्वीपके विषयमे सीखता हो और अितिहासमे बाबरके विषयमे पढ रहा हो; और विज्ञानमे आवाज या बिजलीका विषय सीखता हो। अिन सबका बढअीके कामसे कोअी सबध नही हो सकता। िस प्रकार पुस्तकोके विषयको पुस्तकशालामे और अुद्योगके विषयको अुद्योगशालामे अलग करके रखा जाता है। पुस्तकशालाका शिक्षक अुद्योगशालाके शिक्षकके और अुद्योग-शिक्षक पुस्तक-शिक्षकके विषय नही समझ सकता।

यह ढग अशास्त्रीय है, यह समझानेकी शायद ही जरूरत होनी चाहिये। बालक जो जो विषय सीखे अुनका परस्पर काफी सबध होना चाहिये। जो अनेक वस्तुअे वह सीखता हो, अुनमे से महत्त्वकी वस्तुओके आसपास दूसरे विषय गुथे होने चाहिये। अेक विषयमे से दूसरा विषय जुडकर निकलना चाहिये।

क्या यह सभव है? यह सभव है और अैसा ही होना चाहिये, यही बतानेका वर्धा-योजनाका प्रयत्न है।

अुद्योग द्वारा शिक्षा अुसका मुख्य बिन्दु है। मुख्य बिन्दु कहा है, अिसलिअे यह समझ लेना चाहिये कि अुसमे कुछ अुपबिन्दु भी है। जाकिरहुसेन कमेटीने तीन बिन्दुओ पर जोर दिया है। अुद्योग, समाज और कुदरत। प्रत्येक मनुष्य त्रिविध वातावरणसे घिरा रहता है। अपनी जलवायुके वातावरणसे, अपने सामाजिक वातावरणसे और अपने औद्योगिक वातावरणसे। जलवायु और समाज मिलकर अुसके अुद्योग पर असर डालते है। परतु अेक बार अुसके स्थिर हो जानेके बाद अुसके जीवनका अधिकतर भाग अुसके औद्योगिक वातावरणसे घिरा रहता है। वही अुसके जीवनका सबसे बडा आधार बनता है। अिस प्रकार व्यवहारमे अुद्योग मनुष्यके बाह्य जीवनका मुख्य बिन्दु है और समाज तथा कुदरत दूसरे दो अुपबिन्दु है, यह वर्धा-योजनामे कहा गया है। अिस मुख्य बिन्दुकी तरफ ध्यान खीचकर,

अुसके आसपास शिक्षाको गूथना चाहिये, अैसा पहली बार गाधीजीने बताया है।

परतु अुद्योग तो अनेक है। अुनमे से शिक्षाके लिअे कौनसा चुना जाय? और शिक्षा भी किसकी? बडी आयुके स्त्री-पुरुषोकी नही, परतु सातसे चौदह वर्षके छोटे बालकोकी। अुदाहरणार्थ, अिसमे मोटर बनाने या छत पर डालनेके टीन बनानेका अुद्योग नही सोचा जा सकता। साथ ही अिसमे थोडेसे शहरी बालकोका ही विचार नही करना है, परतु दूर दूरके गावोमे बसनेवाले करोडो गरीब और पिछडे हुअे बालकोका विचार करना है। अिस प्रकार हमे अैसे अुद्योगोका विचार करना है, जो करोडो बालकोके लिअे सोचे जा सके और जिनके आसपास अुनकी सारी शिक्षा गूथी जा सके।

अैसे अुद्योगोमे पहले नम्बर पर और अधिकसे अधिक व्यापक खादीका अुद्योग ही नजर आता है। यह सच है कि खेती हमारे देशका पहले नबरका और सबसे अधिक व्यापक व्यवसाय है, परतु यह व्यवसाय बालकोका नही है। अिसमे बहुतसे बड़ोके साथ थोड़ेसे बालक सहायकके तौर पर काम कर सकते है, परतु अुनकी बराबरी नही कर सकते। बारह वर्षकी अुम्रसे कमके बालक अिसमे महत्त्वपूर्ण भाग नही ले सकते। अिसे बारहो महीने चलानेके लिअे जो प्राकृतिक अनुकूलताअे और जमीनका साधन चाहिये, वे सब जगह नही मिल सकते। अिस प्रकार महत्त्वका व्यवसाय होने पर भी शिक्षाके माध्यमके रूपमे अुसका अुपयोग मर्यादित क्षेत्रमे ही हो सकता है। दूसरे व्यवसाय अितने व्यापक भी नही है और अुनमे भी बालकोकी अुम्र तो बाधक होती ही है। अिसलिअे खादीका अुद्योग ही अधिकसे अधिक व्यापक और अनुकूल मालूम हुआ है।

परतु अिसके साथ अुद्योग द्वारा शिक्षाके माध्यमके रूपमे भी खादी-अुद्योगमे आश्चर्यजनक सुविधाअे है। अत्यन्त प्राचीन कालसे लेकर आज तक कपासने हमारे देशका अितिहास निर्माण करनेमे बड़ा भाग

अदा किया है। अैसा मालूम होता है कि कपासकी खेती और अुसे कातने, बुननेकी खोज हमारे ही देशने पहले की होगी। । 'पेड पर अुगने-वाली अून' और अुसके महीन और मुलायम कपडे देखकर विदेशी आश्चर्यचकित हो गये और अुससे भारतका कपडेका आन्तर-राष्ट्रीय व्यापार जमा। अुसने विदेशियोको भारतकी ओर आकर्षित किया और अुसके कारण जो अनेक राजनैतिक परिवर्तन हुअे अुनका परिणाम आजका हमारा भारत है। अिस प्रकार खादीके साथ हमारे देशका अितिहास गुथा हुआ है। अिसी प्रकार भारतके बाद जिन जिन देशोने कपासकी खेती या कपासके कपडेके अुद्योगका विकास किया, अुन देशोका विचार करे तो लगभग सारे जगत्के अितिहास, भूगोल, अर्थशास्त्र, समाज-रचना तथा राजनीतिके अनेक प्रश्नोमे हमे जाना पडेगा। कपासने मानव-जीवनमे अितना अधिक महत्त्वका भाग अदा किया है।

कपासकी खेतीसे लेकर विविध रगोसे छपी हुअी खादी तकका सारा ज्ञान देने लगे तो अुसमे विज्ञान और गणितके कितने विषयोंका अध्ययन करना पडेगा, यह विचार करना कठिन नही। यत्रशास्त्र, पदार्थविज्ञान, रसायनशास्त्र, कृषिविद्या, वनस्पति-विद्या, जतु-शास्त्र, अकगणित, भूमिति आदिके विविध प्रकरण अिसमे से अनिवार्य रूपमें पैदा होगे। खादी द्वारा यह शिक्षा किस हद तक दी जा सकती है, यह परेशानी होनेके बजाय किस हद तक शिक्षा देकर संतोष माना जाय, यही परेशानी हो सकती है।

अिसके सिवाय अिसकी आध्यात्मिक संभावना भी कम नही है। अिसमे अहिसाप्रधान सस्कृतिकी बुनियाद है। जोर-जबरदस्ती नही, परंतु परिश्रम ही अिसका मूल मत्र है। कबीर जैसे जुलाहेने अिसमे से केवल खादीके थान नही निकाले, परतु धर्म और तत्त्वज्ञानके सिद्धात भी बुनकर बताये है। हमारी भाषाकी कितनी ही कहावतो और रूढ प्रयोगो तथा हमारे जीवनकी कितनी ही रूढ़ियोके आसपास चरखा, पीजन, करघा, रगाअी-काम वगैरा गुथे हुअे है।

मै यहा केवल दिग्दर्शन ही करा रहा हू। व्यवहारमे यह कैसे आयेगा, अिसका आधार शिक्षको पर है। यह अभी तक व्यवहारमे सागोपाग व्यवस्थित करके दिखाया नही गया है। अिसीलिअे मै मानता हू कि अिसका प्रारभ करनेके लिअे शिक्षा-विभागके अनुभवी, अुत्साही और भावनावाले शिक्षक पहले चुने गये है। अिसलिअे अिस शिक्षाकी सफलताका बहुत कुछ आधार आप लोगो पर है। आपको अपनी कल्पना-शक्तिका पूरी तरह अुपयोग करके अुद्योग और अलग अलग विषयोका भरसक कुदरती मेल साधना है। साथ ही दूसरे दो अुपबिन्दुओको भी भूलना नही है। अिन दो अुपबिन्दुओ पर मै बोल नही रहा हू, क्योकि ये नवीन नही है। अिसका अर्थ यह नही कि अुन्हे मै भुलाना चाहता हू।

अिसके लिअे आपको स्वय अुद्योगमे पूरी प्रवीणता प्राप्त करनी होगी। केवल पुस्तक-शिक्षकोसे यह काम नही होगा। यह असभव नही कि कोअी बालक आपसे भी अुद्योगमे बढ जाय, क्योकि आप देरसे प्रारभ कर रहे है। परतु आप अुद्योगमे काफी कुशलता प्राप्त नही करेगे तो काम नही चलेगा।

तकली पर आपको दाये बाये दोनो हाथोकी पूरी गति प्राप्त कर लेनी चाहिये। अिसी तरह रूअी पीजने और चरखा चलानेमे। अिन सबके लिअे जिसे अरुचि होगी वह यह प्रयोग सफल नही कर सकता। मै मानता हू कि आप तो अुत्साह और श्रद्धासे आये है, अिसलिअे आपको अिस बारेमे बहुत कहनेकी जरूरत नही।

हरिजनबधु, २६–३–'३९

७

जीवन-निर्वाहकी शिक्षा

हम सब जानते है कि हमारा देश शिक्षामे बहुत ही पिछडा हुआ है। अिसलिअे कितने ही वर्षोसे हम यह माग कर रहे है कि शिक्षाका प्रसार करो, शिक्षाका प्रसार करो। काग्रेस सरकार बननेके बाद स्वाभाविक रूपमे हम अिसके लिअे अधिक अधीर हो गये है।

परन्तु दूसरी ओर जो लोग शिक्षा पाये हुअे है, अुनमे से बहुतोकी स्थितिकी जाच करे तो हमे निराशा अुत्पन्न होती है। शिक्षा पढाती अधिक है या भुलाती अधिक है, यह अेक प्रश्न ही है। हम जानते है कि जो पढते है वे बापदादोका धधा भूल ही जाते है, और अुसके बदलेमे बहुत ही थोडे लोग कोअी नया धधा सीखते है। किसानका पढा-लिखा लडका खेतीके बारेमे कुछ नही समझ सकता। कुम्हारका अपढ लडका मिट्टीके घडे अुतार सकता है, परन्तु अुसके पढे-लिखे लडकेको मिट्टी गूदना भी नही आता। दरजीका शिक्षित लडका न सी सकता है, न नाप ले सकता है। पढनेके बाद अिन सबकी दृष्टि कोअी क्लर्ककी नौकरी प्राप्त करने पर ही जाती है। हमारी भाषा (गुजराती) मे कारकुन और शिक्षक दोनो 'महेता' (मुशी) कहलाते है, क्योकि दोनोका कागज-कलमके साथ सम्बन्ध रहता है। बहुतसे अपढ़ माता-पिता यह परिणाम समझते है, अिसीलिअे अुन्हे अपने बालकोको पढानेका अुत्साह नही रहता। हमारे देशमे शिक्षाका परिणाम अुल्टा यह आया है कि कअी प्रकारका परम्परासे चला आया ज्ञान भी खतम होता जा रहा है। बुढियाका घरेलू वैद्यक बुढियाके साथ मर जाता है, क्योकि अुसकी पढी-लिखी लडकी अुसमे रस नही लेती। अिसी प्रकार कितने ही प्रकारके कला और कारीगरीके काम किस प्रकार होते थे, यह जाननेवाले अब नही रहे।

परन्तु शिक्षितोकी दशा कुछ सतोषजनक हो तो हम कहेगे कि भले यह पुराना ज्ञान गया तो गया। परन्तु अैसी बात भी नही। लडका चार किताब पढ लेता है और प्रश्न खडा हो जाता है कि अब क्या किया जाय? चार वर्षमे पिताके धधेसे अरुचि हो जाय, अितना ही वह पढता है। अब कोअी मार्ग सूझता नही, अिसलिअे आगे पढनेका निश्चय होता है। अिस प्रकार वह मैट्रिक तक चला जाता हे और फिर वहीका वही प्रश्न पैदा होता है। लेकिन फिर भी कुछ नही सूझता। और आशा तो अमर है। अिसलिअे वह कॉलेजमे जाता है। अिस प्रकार जीवनके बीस-बाअीस वर्ष बिना किसी ध्येयके चले जाते है। जीवनके बीस अमूल्य वर्ष अनिश्चितताका सस्कार मजबूत करनेमे ही बीते, तो सारे जीवन पर अुसका कैसा परिणाम होगा?

अिसके सिवाय हमारी शिक्षा अेक और दृष्टिसे भी पगु सिद्ध हुअी है। हमने जो कुछ पढ़ा है, वह अपने अपढ़ माता-पिता, भाअी-बहन या पत्नीको हम नही दे सकते। बालक पाठशालामे जो कुछ सीखता है अुसकी बात वह घर जाकर नही कर सकता। अुल्टे, यदि अुसकी मा पूछे कि 'क्यो बेटा, तू क्या पढ़ता है, मुझे समझा तो', तो बालक कहेगा, 'वह कठिन है, तेरी समझमे नही आयेगा।' शालामे हम गरमीका विज्ञान जानते और प्रयोगशालामे अुसका प्रयोग करते है, परन्तु घर पर अुसका कोअी अुपयोग नही कर सकते। ज्ञान सक्रामक होना चाहिये। अिसके बजाय वह प्राप्त करनेवालेमे ही क़ैद रहता है। अिसका परिणाम यहा तक होता है कि आजकलका ग्रेज्युअेट बीस वर्ष पहलेके ग्रेज्युअेटको भी अपढ़-जैसा ही समझता है।

शिक्षाकी यह स्थिति है। अब अशिक्षितोको देखे तो अपढ़ बालक सात-आठ वर्षकी अुम्रसे ही अपने माता-पिताकी कुछ न कुछ सहायता करने लगता है। पाच-छ वर्षका होने पर ही, जब मा काम पर जाती है, तब वह छोटे भाअी-बहनोको सभालता है। जरा बड़ा होते ही ढोरोंको सभालने लगता है और घरके छोटे-छोटे काम कर डालता

है। बारह वर्षका होने पर बापके साथ काम करने जाता है, और सोलहवे वर्षमे तो घरका भार अुठाने लायक माना जाता है। अिस तरह पाच-छ. वर्षमे ही वह कुटुम्बका बोझा हल्का करनेमे सहायक होता है। भले ही प्रत्यक्ष मजदूरीके रूपमे अुसके हाथमे कुछ भी न रखा जाता हो, परन्तु अुसके कामका आर्थिक मूल्य तो है। हमारा देश अितना गरीब है कि कुटुम्ब यह लाभ छोड नही सकता। माता-पिता कोअी अपने बालकोके शत्रु नही। साथ ही अपढ़ होने पर भी वे बिलकुल मूढ़ है, यह समझनेका भी कारण नही है; परन्तु आर्थिक परिस्थितिसे विवश हो जानेके कारण ही वे बालकोंको आसानीसे शालामे नही भेज सकते।

फिर भी, हम अनिवार्य शिक्षाका विचार करते है, क्योकि देशको शिक्षा दिये बिना भी काम नही चल सकता। वर्तमान शिक्षाके बारेमे असतोष हो तो अुसे सुधारे, नअी शिक्षाके विषयमे सोचें, परन्तु शिक्षाहीन स्थिति कायम नही रखी जा सकती।

अब अनिवार्य शिक्षाके अर्थका विचार करे। अिसका अर्थ यह है कि लगभग चौदह वर्षका हो तब तक बालक कमसे कम छ. घटे रोज सरकारके अधिकारमे रहे। माता-पिताको अुसे सरकारको सौपना ही पडेगा। अिस प्रकार जो सरकार लोगो पर बन्धन लगाती है, अुस पर दो जिम्मेदारियां सहज ही आ पडती है। सरकार जनताकी है, अिसलिअे ये दो जिम्मेदारिया अुठानेकी तैयारी हो तो ही वह शिक्षाको अनिवार्य करके अपना अस्तित्व बनाये रख सकती है। अेक जिम्मेदारी यह है कि माता-पितासे बालकको ले लेनेके फलस्वरूप अुन्हे जो आर्थिक असुविधा अुत्पन्न हो, अुसका बदला वह बालकके द्वारा ही किसी न किसी तरह चुका दे; और दूसरी यह कि सरकार माता-पिताको यह आश्वासन दे कि अिस प्रकार शिक्षा पाया हुआ बालक शिक्षाके परिणामस्वरूप बेकार नही बनेगा। मतलब यह कि वह बालक यदि

सरकारको अपना परिश्रम देनेको तैयार हो तो अुससे काम लेकर अुसे जीवन-निर्वाह होने लायक मजदूरी देनेकी सरकार तैयारी रखे।

देशकी परिस्थिति, गरीबी, बेकारी, अब तककी शिक्षाकी त्रुटिया और ये दो जिम्मेदारिया, अिन सबका अेक साथ विचार करने पर अिसका अुपाय 'अुद्योग द्वारा शिक्षा' ही सूझ सकता है।

अुद्योग द्वारा शिक्षाका अर्थ किसी धधेकी पूरी तालीम नही है। अिसका अर्थ यह भी नही है कि बालक जो अुद्योग करता हो, वही धधा अुसे जीवनमे करना है। बालकको हम कक्का घुटवाते है और पहाडे रटवाते है, अिसका अर्थ यह थोडे ही है कि वह बाल-पोथी और पहाडोकी पुस्तक पढकर ही रह जायगा? जो पहली, दूसरी या अन्य पुस्तके वह वर्गमे पढता है या सवाल करता है, अुसीमे अुसकी पुस्तकीय शिक्षा समाप्त नही हो जाती। यह कक्का और पहाडे अुसे लेखन-वाचन और गणितकी कुजिया जरूर देते है। परन्तु यह शिक्षा अुसे किसी तरह अुद्योगमे लगनेकी कुजी नही देती, क्योकि सारी शिक्षामे अुससे किसी अुद्योगके मूलाक्षर अथवा पहाडे रटवाये ही नही जाते। अुल्टे, अुसका मन अिस ढगसे तैयार होता है कि अुद्योगके प्रति अुसे अरुचि हो जाय।

अतः अुद्योग द्वारा शिक्षा अिस त्रुटिको सुधारनेके लिअे है। जड और कुशल दोनो प्रकारकी मजदूरी करनेकी बालकको आदत पडे और बनी रहे, अुसे करनेकी जानकारी हो, अुसमे अुसे रस आये, किसी भी अुद्योगमे लगने और अुसे सीख लेनेमे अुसे प्रतिष्ठा मालूम हो, यह अुद्योग द्वारा शिक्षाका अेक अग है।

परन्तु यह भी कअी तरहसे किया जा सकता है। अैसी-अैसी युक्तिया ढूढी जा सकती है, जिनसे बालक सुबहसे शाम तक तोड-फोड करता रहे, कठिन परिश्रम करे, अुसके द्वारा कुछ हद तक अुसका शरीर और अिन्द्रिया भी कसे, और फिर भी अुसे अुद्योगका अर्थात् जीवनके लिअे

आवश्यक किसी वस्तुके अुत्पादनका वातावरण न मिले। यह सब अेक प्रकारके खेलकी तरह ही किया जाय।

तब अुद्योग द्वारा शिक्षामे अुद्योगका अर्थ जीवनमे महत्त्वका भाग अदा करनेवाला कोअी अुद्योग समझना चाहिये। और अैसे अुद्योग द्वारा शिक्षाकी योजना करनी है। दूसरे शब्दोमे यह अुत्पादक अुद्योगकी अथवा जीवन-निर्वाहकी शिक्षा कही जा सकती है।

अिसलिअे बालक शालामे आकर किसी न किसी अुद्योगमे लग जाय। अिस अुद्योगका अुसके और जिस समाज या गावमे वह रहता है अुसके जीवनमे महत्त्वका स्थान होना चाहिये। शालामे आकर अुसे अैसा कुछ करना और सीखना चाहिये, जिससे अुसके माता-पिता भी थोडे ही समयमे जान ले कि अुसका शाला जाना स्वागतयोग्य है, वह घरमे कुछ न कुछ लानेकी शक्ति प्राप्त कर रहा है, वह कुछ अैसा पढ रहा है जिसकी छूत घरमे लगे तो घरको भी लाभ होगा।

आजके ग्रामजीवन पर दृष्टि डाले तो चारो ओर निराशा फैली हुअी दिखाअी देती है। अपनी आर्थिक चिन्ताअे कैसे मिटे, अिसका किसीको कोअी मार्ग नही सूझता। अिस निराशाकी ग्लानिको मिटानेके लिअे लोग गलत मार्ग पर लग जाते है। निराशाको भूलनेके लिअे वे सट्टा, जुआ, नशा आदिके व्यसनोमे फसते है। जीवनकी आवश्यकताअे पूरी करनेवाला अुद्योग ही अिस निराशाको मिटानेका अेकमात्र अुपाय है।

माता-पिता देखेगे कि बालक शाला जाकर आलसी नही, परन्तु काम करनेवाला बनता है। अपने कपडोके लायक सूत तो वह थोडे ही समयमे कातने लगता है; फुरसतके समयमे तकली चलाता है, पीजन चलाता है या कोअी न कोअी सफाअी-काम करता है, फुलवाडी लगाता है या अैसा ही कुछ करनेमे मशगूल रहता है। अिसके अलावा, मै तो यह भी चाहूगा कि बालककी मजदूरीका कुछ हिस्सा अुसे खुराकके तौर पर मिले। मुझे निश्चित ही अैसा लगता है कि अधिकाश बालकोकी सुस्ती, शारीरिक या मानसिक अचपलता और मद बुद्धिका

कारण अुचित पौष्टिक खुराककी कमी है। वैसे भी सरकारने गाधीजीका स्वावलबी शिक्षाका आग्रह स्वीकार नही किया है। अिसका अर्थ यह है कि वह शिक्षाका खर्च दूसरी तरह भी निकालनेकी हिम्मत करेगी। तो पैदावारका अेक अश बालकको देनेकी बात गभीरतासे विचारने जैसी है। अैसा हो तो माता-पिताको बालकका व्यर्थ घरसे गैरहाजिर रहना नही खटकेगा। अुन्हे मवेशी सभालनेकी परेशानी होगी। अिसके लिअे वे दूसरा रास्ता खोजेगे। परन्तु वे बालकको शाला जानेसे रोकना नही चाहेगे। अिसके सिवाय यदि अुन्हे यह विश्वास हो जाय कि बालक और कुछ चाहे न कर सके लेकिन कातने-बुननेकी मजदूरी करके तो पेट जरूर भर सकेगा, तो अुन्हे अुसके भविष्यकी चिन्ता नही रहेगी। अिस प्रकार अुद्योग द्वारा शिक्षा अुनके लिअे आशाका स्थान बन जायगी।

हरिजनबन्धु, २–४–'३९

८

नअी तालीमका शिक्षक

चरखा-संघके नामसे आप सब परिचित हैं। आप अुसे खादी अुत्पन्न करनेवाली सस्थाके रूपमे जानते हैं। अिसका अग्रेजी नाम अधिक सूचक है। अुसका अर्थ होता है कातनेवालोका सघ। यह सस्था साधारण अर्थमें व्यापारिक संस्था नही है। मजदूरीसे हाथ-कताअी और बुनाअी करवा कर तथा लोगोकी देशभक्तिकी भावनासे लाभ अुठाकर अेक प्रकारके कपडेका व्यापार हथिया लेना और नफा कमाना अुसका अुद्देश्य नही है। अिसके कार्यकर्ताओको जितनी खादी वे अुत्पन्न करायें या बेचें अुसके हिसाबसे दलाली या नफेमें हिस्सा नही दिया जाता। अुन्हें तो अपना निश्चित वेतन ही मिलता है। अिसका कारण यह

है कि चरखा-सघ खादीका व्यापार करनेके लिअे खादीके काममे नही पडा है, परन्तु कताअी द्वारा गरीब ग्रामीणोकी आर्थिक और सामाजिक सेवा करनेके लिअे अिसमे पडा है। अुसके कार्यकर्ताओका कर्तव्य सस्तेसे सस्ते मजदूर ढूढकर खादीके ढेर पैदा कराना और अुन्हे महगीसे महगी कीमत पर बेचना नही है, न निश्चित मजदूरी अीमानदारीके साथ चुका देनेसे ही अुनका कर्तव्य पूरा हो जाता है। परन्तु कार्यकर्ताओसे यह अपेक्षा रखी जाती है कि वे कातनेवालो और बुननेवालोके जीवनमे प्रवेश करे, अुनके जीवनको सुधारे और अुनमे जागृति पैदा करे।

नअी तालीमके शिक्षकोका कर्तव्य भी अिससे मिलता-जुलता है। अुनका भी सपत्ति अुत्पन्न करनेवाले कार्यकर्ताओका अेक समूह है। अुनका अुद्देश्य व्यापार करना नही, परन्तु अिस सपत्तिको पैदा करनेवालोका हित साधना और अुनकी सेवा करना है। यहा जिनके द्वारा सपत्ति पैदा करनी है, वे बडी अुम्रके स्त्री-पुरुष नही है, परन्तु छ-सातसे चौदह-पद्रह वर्षके लडके-लडकिया है। अिनके लिअे शिक्षाकी दृष्टिसे, गावोकी दृष्टिसे और समाजकी दृष्टिसे अनुकूल कुछ धधे ढूढे गये है या ढूढे जायगे। अिन कार्यकर्ताओ या शिक्षकोसे यह अपेक्षा रखी जायगी कि वे ये धधे अुत्तम ढगसे सिखाये, कराये और अिस निमित्तसे बालकोके जीवनमे प्रवेश करके अुन्हे जीवनोपयोगी शिक्षा दे तथा दूसरे प्रकारसे अुनका जीवन सुधारे। जहा खादीको अैसे धधेके रूपमे चुना गया होगा, वहा अैसा मानिये कि वह चरखा-संघकी अेक स्वतत्र और विशिष्ट शाखा है। अेक अेक शाला अेक अेक अुत्पत्ति-केन्द्र है। अुसमे सात-आठ सस्कारी, सुशिक्षित और खास तालीम पाये हुअे कार्यकर्ता — खादीसेवक — रखे गये है। चरखा-सघकी तरह ही अिनके वेतन निश्चित है और अुन्हे स्वतत्र रूपमे मिलते है। फिर भी, जैसे चरखा-सघ अपने कार्यकर्ताओसे यह अपेक्षा रखता है कि वे कत्तिनोके हितोकी रक्षा करे और अुनके हितार्थ ही अिस ढगसे काम करे कि कत्तिनोकी कुशलता बढे, मालका बिगाड न

हो और कमसे कम अुस केन्द्रका खर्च वहासे निकल आये, अुसी तरह शिक्षा-विभाग भी अपने कार्यकर्ताओसे अैसी ही अपेक्षा रखेगा। अिसमे कुशलता, बिगाड वगैराके मामलेमे यह बात अवश्य ध्यानमे रखी जाय कि अुन्हे बालकोके द्वारा काम लेना है।

तब अैसा समझिये कि अेक शालाका अर्थ सात-आठ बडे कार्य-कर्ताओ और कोअी दो सौ बालकोका अेक बडा कुटुम्ब है। अुन्हे पूजीके सिवाय दूसरा खर्च खादी पैदा करके निकालना है। और पासमे जो दो-चार बीघा जमीन है, अुसमे थोडे-बहुत फलफूल, शाकभाजी भी पैदा करे, अिसकी कीमत शिक्षा और मनोरजनकी दृष्टिसे तो बडी होगी, परन्तु आयके खयालसे तुच्छ मानी जायगी। कपास ओटनेसे लगाकर अेक खास प्रकारकी बुनाअी तकका धधा करनेकी अिसमे छूट है। बालक अलग-अलग अुम्रके होगे। अुनकी अुम्रका खयाल रखकर ही अुनसे काम लिया जा सकता है। जो काम कराया जाय अुसमे अिन बालकोके हित और शिक्षाकी जाच करनेकी जिम्मेदारी भी है। अिन मर्यादाओके बीच काम करना है।

अिसमे अुम्रके कुछ स्वाभाविक विभाग जरूर होगे। प्रत्येक कार्यकर्ता अेक-अेक समूहको सभालेगा। जिस समूहसे जो काम कराना हो अुस कामकी वह देखरेख रखे और बालकोके साथ अुस काममें शरीक हो। अुदाहरणार्थ, कभी कभी वह छोटे बालकोके साथ कपास साफ करने बैठे। अुस समय वह अुन्हे कपास साफ करनेका तरीका बताये, साथ साथ बिना कचरेकी कपास अिकट्ठी करनेकी बात करे। कपासमे आनेवाले कचरेके प्रकार समझाये। अपने पास जो कपास हो अुसकी किस्म वगैराके बारेमे बालकोसे कहे। शालामे और किसी किस्मकी कपास हो तो अुसके साथ अपनी कपासकी तुलना कराये। अिसी तरह अलग-अलग समूहोमे खादी-सम्बन्धी अलग-अलग क्रियायें होती रहे; और अुनके सम्बन्धमे विविध जानकारी बालकोंके शिक्षक अुन्हे दे। अुनमे काम आनेवाले औजारो, साधनो और यत्रो

आदिका ज्ञान, गणित और अितिहास भी बताया जाय। अिस प्रकार खादीको केन्द्रमे रखकर बालकको विविध प्रकारसे पढा-गुना और विविध जानकारीसे पूर्ण बनाया जाय। अिसीमे से खादीकी और गावोकी आर्थिक, सामाजिक और राजनैतिक समस्याये भी अुत्पन्न होगी। अिसलिअे अिसमे देशकी वर्तमान राजनैतिक, सामाजिक और आर्थिक सस्थाओके प्रश्नोकी चर्चा करनी पडेगी। विद्यार्थीका अुनके कामोके साथ प्रत्यक्ष सम्बन्ध होनेसे वह केवल पुस्तकीय जानकारी रखनेवाला या 'नागरिक-धर्म' की पुस्तक पढा हुआ नागरिक नही बनेगा, परन्तु व्यवहारमे पडा हुआ नागरिक बनेगा।

यह तो केवल अुद्योगका विचार करके चित्र खीचा गया है। परन्तु अिसके सिवाय जिस कुदरत और समाजके बीच बालक रहता है, अुसका विचार करके भी अुसे विविध प्रकारसे कुशल बनाना पडेगा।

अैसा भी अेक वर्ग है जो अुद्योग द्वारा शिक्षाकी हिमायत करता है, परन्तु अुसमे अुद्योगसे बननेवाली वस्तुको महत्त्व नही देता। वह बिलकुल निरुपयोगी और बनाकर फेक देने जैसी भी हो सकती है, शायद थोडे समय शोभा बढानेके लिअे या कुतूहलसे आलमारीमे दिखानेकी भी हो सकती है। वे यह मानते है कि अिस शिक्षासे बालकके हाथ-पैरोको तालीम मिले और अुसे मनोरजनके साथ शिक्षा मिले तो काफी है। अिसलिअे वे मानो सिद्धान्तके तौर पर यह मानते है कि अुद्योग द्वारा शिक्षामे बिगाड तो होता ही है। वर्धा-योजना जिस शिक्षाकी हिमायत करती है, अुसमे बिगाडका अनिवार्य स्थान नही है। अनिवार्य रूपमें कुछ न कुछ बिगाड हो और अुसे हिसाबमे लेना पडे, यह अलग बात है, परन्तु बिगाड ध्येयके रूपमें नही होना चाहिये। अिसी तरह केवल शोभा या कुतूहलको महत्त्वका स्थान नही मिलना चाहिये। आप अपनेको अेक अुत्पत्ति-केन्द्रके कार्यकर्ताके रूपमे समझने लगे, तो यह बात तुरंत ध्यानमे आ सकती है। अथवा, यो सोचिये कि कोअी

बढअी या दर्जी अपने बालकको अपना धधा करते-करते सिखाये तो वह बिगाडके लिअे लकडी या कपडेकी कितनी सुविधा अुसे देगा? जलानेके टुकडे या कतरनो पर वह थोडे दिन बालकको खेल करने देगा, परन्तु बादमे वह अुसे छोटे-छोटे किन्तु अैसे काम सौपेगा जिनके लिअे अुसे मजदूरी मिलनेवाली हो। आज बनाया और कल जला दिया, अैसी पद्धतिसे सिखाना अुसे कभी पुसायेगा नही। अिसलिअे यह समझकर चलना चाहिये कि सिखानेके लिअे कच्चा माल खरीदना और अुसका अधिकतर भाग बिगाड खाते लिख डालना पुसायेगा नही।

शालामे चलाया जानेवाला धधा भले ही आसान हो, परन्तु यह ध्यानमे रखना चाहिये कि वह धधा है, मजाक नही। अेक पद्धतिके रूपमे ही कुछ बेकार नही फेका जा सकता या नही बिगाडा जा सकता।

यदि आप मेरी बात अच्छी तरह समझ गये हो तो अब आपको यह सोचने लगना चाहिये कि आप शिक्षक न रहकर अुद्योगके कार्य-कर्ता बन गये है। अब आप बुनाअीके धधेमे लग गये है। और फिर आपके स्त्री-बच्चे भी होगे ही। वे भी अिसमे मदद दे। अिससे शालाके बालक, आप, आपका परिवार सबकी मानो अेक बडी सहकारी समिति बन जायगी।

परन्तु आप तो बुनाअीका धधा करनेवालेके अुपरान्त शिक्षक — अर्थात् ब्राह्मण — भी है। आपको अपना यह धर्म छोड थोडे ही देना है? अिस प्रकार आपकी केवल अेक धधा करनेकी ही जिम्मेदारी नही, बल्कि अुसे सिखाने और अुसका शास्त्र निर्माण करनेकी भी जिम्मेदारी है। अैसा नही लगता कि पहलेके ब्राह्मण केवल साहित्य, व्याकरण, तत्त्वज्ञान या कर्मकाण्डके ही शास्त्र रचते या सिखाते होगे। द्रोण कौन थे? वे शस्त्रविद्याके शिक्षक थे। यही हाल परशुरामका था। अिसी प्रकार अनेक धन्धोके शास्त्र भी ब्राह्मण ही रचते थे।

परन्तु द्रोण स्वय अुत्तम योद्धा न होते तो वे शस्त्रविद्या कैसे सिखा सकते थे? धधे अैसी चीज नही है, जिन्हे अेक आदमी सिखाये और दूसरा न जाननेवाला आदमी अुनका शास्त्र बना सके।

अिसका अर्थ यह है कि नअी तालीममे यह भेद नही रखा जा सकेगा कि अुद्योगके शिक्षक अलग और पुस्तकके शिक्षक अलग है। प्रत्येक शिक्षकको धधेकी क्रियामे कुशल होना ही चाहिये। आज हमारी स्थिति यह है कि हमारी शालामे अगर कोअी धन्धा चलता होगा तो अुसमे काम आनेवाले औजारो या यत्रोके भागोके नाम तक पुस्तक-शिक्षकको मालूम न होगे। दूसरी अनेक देश-विदेशकी बाते वह कर सकेगा, कमलके दस पर्याय बता सकेगा, विज्ञानकी सूक्ष्म परिभाषा दे सकेगा, परन्तु चरखेके अलग-अलग भागोके नाम अुसके विद्यार्थी पूछे तो वह नही बता सकेगा। अुनमे से प्रत्येकके अलग-अलग नाम खोजने ओर न हों तो रखनेका भी हम परिश्रम नही करते। नअी तालीममे यह स्थिति नही रहनी चाहिये। जो शिक्षक अिस प्रकार बारीकीमे जायगा, अुसे पता चलेगा कि अुद्योग द्वारा कितना भाषा-ज्ञान, विज्ञान, गणित वगैरा बढ सकता है, कितना नया साहित्य निर्माण हो सकता है, कितना बुद्धिका विकास और अिन्द्रियोकी सूक्ष्मता साधी जा सकती है और किस तरह समाजकी नवरचनाकी बुनियाद डाली जा सकती है। अिसका क्रान्तिकारी असर पहले हमारे अपने ही जीवनमे मालूम होने लगेगा।

हरिजनबन्धु, ९–४–’३९

९

वर्धा-शिक्षाका अेक नमूना

मेरे घरकी खिडकीके सामने अेक सूखे हुअे पेडका तना खडा था। कल सुबह मकान-मालिकके नौकरने अेक साथीकी मददसे अुसे गिरा दिया और दोपहरके बारह बजे तक करवतसे काटकर अुसके बडे-बडे टुकडे कर दिये। अुसके साथ अुसकी पत्नी और पाचेक वर्षका अेक लडका भी आया था। पत्नीने लकडिया अुठा ले जानेमे साथ दिया, बारह बजे काम पूरा हुआ तब लम्बा करवत भी वही अुठा कर ले गअी। जो तीन-चार घंटे अिस काममे लगे, अुतने समय तक वह लडका भी साथ रह कर कुछ न कुछ करता रहा। छोटे टुकडे अुडते अुन्हे अुठाकर वह अेक जगह रखता, साथ ही करवत चलता अुसका मजा भी देखता। बारह बजे नौकरने करवत हाथमे छोडा कि लडकेने तुरत अुसे दोनो हाथोसे घसीटकर लकडीके अेक टुकडे पर चढाकर टिका दिया। करवतके दाते पहले अूपरकी ओर रखे। फिर कुछ विचार आया, अिसलिअे पलट कर नीचेकी ओर कर दिये। फिर कुछ विचार आया, अिसलिअे टुकडे परसे अुतारकर व्यवस्थित रूपमे करवतको जमीन पर लिटा दिया। फिर पासमे पडी हुअी रस्सी हाथमे ले ली। यह सब अुसने खुद ही किया, किसीके कहनेसे नही। अुल्टे, अिस क्रियाके साथ वह कुछ बोलता जा रहा था।

वह यह कर रहा था, अितनेमे नौकरने करवत पत्नीके सिर पर रखा और अेक बडा लकडा साथीके सिर पर रखा। और सब अपने घरकी ओर बिदा हुअे।

नौकर और अुसकी पत्नी अपढ थे। बालकको अपने कामके साथ कुछ न कुछ शिक्षा देना अुनके लिअे सभव नही था। वह कुछ सीखेगा, अिस दृष्टिसे वे अुसे साथ लाये ही न होगे। वह तो माके पीछे-पीछे चला आया होगा। परन्तु अुसे माता-पिताके काममे रस

आया। यह काम अुनके जीवनके साथ सम्बध रखता है और किसी न किसी तरह आवश्यक है, यह भी अुसे जरूर पता चल गया होगा। अिसलिअे अुसने माता-पिताके कामका ध्यानपूर्वक निरीक्षण किया, और अपनी बालबुद्धिके अनुसार अुसमे रसपूर्वक भाग भी लिया। अिस कारणसे वह तीन-चार घटे माता-पिताको तग किये बिना वहा मौजूद ही नही रहा, वल्कि अपनी छोटी छोटी क्रियाओ और मीठी बोलीसे अुसने माता-पिताका श्रम भी मिटाया।

अिसी वस्तुको शास्त्रीय पद्धतिसे व्यवस्थित रूप दे दिया जाय तो वह विद्या बन जाय और अुससे वर्धा-शिक्षाका शास्त्र निर्माण हो जाय।

'शिक्षण अने साहित्य', अप्रैल १९४०

१०

कमानेवाली शिक्षा

[सेवाग्राम राष्ट्रीय शिक्षा सम्मेलनमे पेश किया गया प्रस्ताव और अुस पर किया गया विवेचन।]

प्रस्ताव

"अिस सम्मेलनकी यह राय है कि गावोमे शिक्षाकी अैसी व्यवस्था करनी चाहिये, जिससे किसी भी साधारण प्रौढ विद्यार्थीको वह शिक्षा पा रहा हो अुसी कालमे शिक्षाका खर्च निकाल सकने लायक मजदूरी मिल सके। यदि गावोकी शिक्षा-सस्थाये अैसी चीजे बनाने लगे जो अुपयोगी भी हों और शिक्षाकी दृष्टिसे कीमती भी हो तो ही यह हो सकता है। यह हो सके अिसके लिअे देशकी आर्थिक व्यवस्थामे भी साथ ही साथ क्रान्ति करनी पडेगी। अर्थ-व्यवस्था और शिक्षाके क्षेत्रमे अैसी दोहरी क्रान्तिके फल-स्वरूप साधारण और बुद्धि-

हीन कही जानेवाली मजदूरी और कुशल कारीगरी दोनोकी दरोमे सब तरफसे और खासी अच्छी वृद्धि होनी चाहिये; अन्न-वस्त्र, मकान और जीवनकी दूसरी जरूरी चीजोकी पैदावारमे भी काफी वृद्धि होनी चाहिये। अिसके लिअे 'नअी तालीम' के औद्योगिक मशोधनका अुद्देश्य छोटे पैमानेके और अलग-अलग बिखरे हुअे अुत्पादक धधोको आर्थिक दृष्टिसे सफल बनाना होना चाहिये। 'नअी तालीम' को ग्रामवासियोके श्रममे वृद्धि किये बिना गावोका आर्थिक स्तर अूचा अुठाना चाहिये। अुत्पादनका मुख्य अुद्देश्य व्यापार और अुद्योगमे नफा और ब्याज कमाना नही, परन्तु देशकी आतरिक स्वयपूर्णता और अुसके सबसे ज्यादा पिछडे हुअे वर्गोके लिअे सुखके साधन मुहैया करना होना चाहिये।"

दोहरी क्रान्तिकी आवश्यकता

सत्याग्रह आश्रम स्थापित हुआ तबसे गाधीजी अिस बातका आग्रह करते आये है कि शालामे पढनेवाले विद्यार्थी कोअी न कोअी अुपयोगी वस्तुअे निर्माण करे। बुनियादी शिक्षाके आरभमे भी अुन्होने हमसे कहा था कि विद्यार्थियोके कामसे शिक्षकोका वेतन निकलना चाहिये। अिस मुद्दे पर अुन्होने 'हरिजन' पत्रोमे भी कअी बार लिखा है। बुनियादी शिक्षाकी योजना तैयार करनेके लिअे जब जाकिर-हुसेन कमेटी बैठी थी अुस समय हमने गाधीजीका यह मुद्दा अशत. स्वीकार किया था।

अब गाधीजी कहते है कि सारी शिक्षा पूरी तरह स्वावलंबी होनी चाहिये। गोसेवा-सघमे तालीम पानेके लिअे आया हुआ कार्यकर्ता स्वाश्रयी बनकर किस तरह तालीम पा सकता है, यह प्रश्न अुठने पर अुन्होने अपना यह स्पष्ट मत दिया कि अनिवार्य रूपमे स्वाश्रयका ही सिद्धान्त स्वीकार किया जाना चाहिये। स्वावलबनसे कॉलेजका अध्ययन-क्रम पूरा करनेवाले लोग हमारे यहा है। ये लोग अधिकतर ट्यूशन आदिकी सहायतासे अैसा करते है। परन्तु ट्यूशन सबको

कहासे मिले? वह तो बम्बअी जैसी जगहोमे ही मिल सकती है। परन्तु अमरीकामे हमारे यहाके विद्यार्थियोने बेशक अिस ढगसे शिक्षा प्राप्त की है।

रूसमे वहाकी सरकार अिसके लिअे जबर्दस्त कोशिश करती है कि कोअी भी प्रजाजन अपढ न रहे। परन्तु वहाका तरीका दूसरा ही है। हमारे यहा मजदूरी करनेवालेके लिअे प्रगतिकी कोअी दिशा ही नही होती। अेक बार मनुष्य रसोअिया बना कि सदाके लिअे रसोअिया ही रहता है। अुसके जीवनमे प्रगतिके लिअे स्थान ही नही होता। मनुष्य जो काम करता हो वह भी प्रगतिशील होना चाहिये। अमरीकामे अैसा नही है। कार्नेगी, फोर्ड और अेडिसन जैसोके अुदाहरण जानने लायक है। वे मेहनत-मजदूरी करके आगे बढे और समाजमे प्रमुख स्थान पर पहुचे।

यह मार्ग हमारे यहा खुला नही है, अिसके लिअे हम ब्रिटिश सरकारको दोष नही दे सकते। यदि हम चाहते हो कि हमारे यहा भी अैसा हो तो अिसके लिअे अनुकूल वातावरण पैदा करना चाहिये। अमरीकामे यह कैसे सभव हुआ है? अिसलिअे कि वहा मजदूरीका स्तर अूचा है। मजदूरीका स्तर अूचा हो अिसके लिअे आर्थिक स्थितिमे क्रान्ति करनेकी जरूरत है। मजदूरीका स्तर अूचा अुठायेगे तो ही मजदूरी करनेवालेके जीवनमे अुत्साह आ सकता है। दस-ग्यारह घटे कडी मेहनत करनेके बाद वह रात्रिशालामे कैसे आ सकता है? अिसलिअे मजदूरी देकर पढाया जा सके, अैसी स्थिति अुत्पन्न करनी चाहिये। यह हाथके अुद्योगकी विद्या द्वारा ही सभव हो सकता है। अन्न-वस्त्र आदिकी कमी नही होनी चाहिये। हवा और पानीकी तरह ये चीजे पूरी मात्रामे मिल सकनी चाहिये। अन्न और वस्त्र पूरी मात्रामे मिलनेके लिअे कोअी हमे अमरीका और रूसकी अुत्पादन-पद्धति बताये तो वह हमारे कामकी नही। क्योकि बेकार आदमी अुसे कैसे प्राप्त कर सकते है? अिसलिअे छोटे पैमाने पर और अलग-

अलग बिखरे हुअे केन्द्रोमे अुत्पादन करनेकी पद्धति हमे स्वीकार करनी चाहिये। अिस काममे हमे विज्ञानका अुपयोग करना पडेगा। यह देखना होगा कि ये धधे आर्थिक दृष्टिसे कैसे सफल बनाये जा सकेगे। यह मै कोअी अवैज्ञानिक बात आपसे नही कह रहा हू। यह सच है कि अिस प्रकारके औद्योगिक 'टेकनिकल' सशोधनकी जिम्मेदारी तालीमी सघके सिर पर आती है। सभव है कि यह सब करनेके बाद भी हमारी स्थितिमे सुधार न हो। अिसलिअे अेक और वस्तुका विचार करना होगा। यह सब करनेका प्रयोजन क्या है? नफा, ब्याज आदि कमाना? नही। अिस्लाममे ब्याज लेना हराम है। यही बात हमे करनी होगी। सोनेवाले हिस्सेदार, अनुपस्थित जमीदार अथवा साहूकार जैसी कमाअी करते है, वैसी नही हो सकनी चाहिये। रुपया लेनेवाला आदमी यह कह सकता है कि भाअी, मै तुम्हारा मुद्दलका मुद्दल चुकाअूगा, बल्कि पाच सौके चारसो निन्यानवे दूगा, क्योकि मै तुम्हारी पूजीकी रक्षा करूगा!

ये सब धधे नफेके लिअे नही चलने चाहिये। हमे देशके चालीस करोड लोगोकी आवश्यकताअे पूरी करनी है। देशको स्वयपूर्ण बनानेका प्रयत्न करना है। जीवनके साधनोका अभाव किसीको कही भी बाधक नही होना चाहिये। आज तो किसानोमे जीनेका भी अुत्साह नही रहा। मोक्षका हमारा तत्त्वज्ञान थोडेसे लोगोके लिअे भले ही बना हो, परन्तु वह करोडोका ध्येय नही हो सकता। किसलिअे जिये, यही प्रश्न है। बिनमागा जन्म मिलनेके बाद मृत्यु भी वैसी ही मिलती है। जीवनके हेतुका सर्वथा अभाव दिखाअी देता है। लोगोका किसी काममे अुत्साह नही रहा। अुन्हे यह डर रहता है कि यदि ज्यादा मेहनत करेगे तो सेठ, साहूकार या सरकार छीन लेगी। अैसी प्रजाको जीवनका ध्येय मिलना चाहिये — अुसे अुसका भान कराना चाहिये। अुसे यह सिखाना होगा कि पराधीनताका नाश करना है। अज्ञानकी दशामे से ज्ञान, दरिद्रतामे से समृद्धि, रोगमे से आरोग्य और विषमतामे से

समानता — अेकताकी तरफ अुसे प्रगति करनी है। नौकर मालिकका काम भले ही करे, परन्तु अिस कारणसे अुसका स्थान मालिककी बराबरीमे क्यो न हो? वह भी मालिकका अेक प्रकारका मत्री या सेक्रेटरी ही तो है? मालिकके लिअे पत्रादि लिखनेवाला अुसका सेक्रेटरी कहलाता है, तो मालिकके लिअे रसोअी बनानेवाला भी सेक्रेटरी क्यो नही माना जाना चाहिये? यह सच है कि मैने यह वस्तु सिद्ध नही की है, परन्तु मुझे अिसका भान हुआ है कि यह दोष है। हममे यह भावना जाग्रत होनी चाहिये कि मैले कपडेवाला प्रतिष्ठाका पात्र है।

कामके कारण मनुष्यको प्रतिष्ठा मिलनी चाहिये, न कि स्वच्छ अुजले कपडोके कारण या आरामसे बैठे रहनेके कारण।

'शिक्षण अने साहित्य', फरवरी १९४५

११

'नअी तालीम' का संदेश

पिछले कुछ वर्षोसे गाधीजी अपने पहलेके प्रिय विषय चरखेके बनिस्बत 'नअी तालीम' के बारेमे अधिक बोलते थे। अिसका कारण यह नही था कि अुनकी दृष्टिमे चरखा पहलेसे कम महत्त्वका हो गया था। अुल्टे, हाथ-कताअी और हाथ-बुनाअीके बिना अुनकी कल्पनाकी 'नअी तालीम' का अमल करना ही असभव है।

नअी तालीम और चरखेके बीचके सबधकी गाधीजीकी कल्पना सत्य और अहिंसाके बीचके सबधसे लगभग मिलती-जुलती है। गाधीजीकी रायमे सत्य ही अीश्वर और ध्येय है, और अहिसा अुसे प्राप्त करनेका साधन — अेकमात्र सच्चा और सबल साधन है। अिसी प्रकार नअी तालीम ध्येय है और चरखा अुसे प्राप्त करनेका साधन है। और जिस प्रकार अहिसा शब्दसे केवल अहिसा ही न

समझकर अुसमे सयम, अपरिग्रह आदि दूसरे यमोका समावेश करना होता है, अुसी प्रकार चरखेमे भी विश्वशातिकी पक्की बुनियाद डालनेके लिअे आवश्यक धधे-सबधी, सामाजिक, धार्मिक, सास्कृतिक, राजनैतिक और आर्थिक आदि सारी मानव-प्रवृत्तियोका समावेश कर लेना है।

नअी तालीमको जिस तरह मैं समझता हू, अुसके अनुसार यह शब्द किसी बुनियादी अुद्योग अथवा जिसे 'अुत्पादक प्रवृत्ति' कहा जाता है अुसके द्वारा दी जानेवाली शिक्षाका पर्यायरूप ही नही है। अुसी तरह, जैसा कअी बार कहा जाता है, अिसका अितना ही भावार्थ नही है कि बुनियादी अुद्योगके साथ पाठ्यक्रमके सब विषयोका सबध जोड दिया जाय अथवा आयोजन कर दिया जाय। शिक्षाकी अेक नअी कला अथवा पद्धति कहने मात्रमे जो कुछ सूचित होता है, अुससे कही गहरा रहस्य अिसमे छिपा हुआ है।

विचार करने लायक प्रश्न तो यह है कि हमे आजकल कौनसा ध्येय सिद्ध करनेके लिअे तालीम दी जाती है? हम अपनी शिक्षा-सबधी सारी प्रवृत्तियोसे — फिर भले ही वे प्राथमिक, माध्यमिक, अुच्च अथवा निष्णातोकी शिक्षाकी हो — किस प्रकारका समाज पैदा कर रहे है या करना चाहते हैं? आधुनिक शिक्षाकी सारी सीढिया पार कराकर अेक महत्त्वाकाक्षी, बुद्धिशाली युवक (अथवा युवती) को हम किस प्रकारके जीवनके लिअे तैयार करना चाहते है? विद्यार्थीको युद्धकी तत्परताके साथ मेल खानेवाले जीवनके लिअे तैयार करना चाहते हैं या शातिस्थापनके साथ मेल खानेवाले जीवनके लिअे? आज अुसे अनिवार्य फौजी शिक्षा पानेके लिअे और फौजी नौकरी, मुल्की नौकरी, बडी मात्रामे अुत्पादन, विराट अुद्योग, पूर्ण शस्त्र-सज्जता, राजनैतिक दलोका सगठन आदि 'करियरो' के लिअे तैयार किया जाता है। वह अेक समर्थ राजनीतिज्ञ, अेक सफल पत्रकार, अेक प्रभावकारी प्रचारक अित्यादि बनना चाहता है। अुसे अैसा जीवन जीनेकी तालीम दी जाती है, जिसमे अुसे सतत विमानोमे घूमनेको मिले

तथा जो अद्यतन विपुल साधन-सम्पत्तिवाला हो। अुसका बस चले तो वह देहातमे व्यतीत करनेका, जन्मसे लेकर मृत्यु तक खेतोमे पशुओके साथ रहनेका अथवा हाथ-करघे पर बुनाअीके काममे लगे रहनेका तथा गावोके प्रश्नो पर ध्यान देकर गावोका जीवन-स्तर अूचा अुठानेके काममे व्यतीत करनेका जीवन पसद नही करेगा। आज हम अपनी प्रजाको जिस प्रकारकी शिक्षा देते है, वह अेक बुद्धिशाली और महत्त्वाकाक्षी युवक अथवा युवतीको अिस प्रकारके जीवनसे सतुष्ट रहनेवाला हरगिज नही बनाती। फिर भले ही अिस जीवनके साथ यह आश्वासन दिया जाय कि वह काम करेगा तो अुसे अेक अच्छासा घर, पेटभर पौष्टिक भोजन, पर्याप्त वस्त्र, अच्छी सगति और निर्दोष आनद लेने लायक सस्कारी प्रवृत्तिया मिल जायगी। अिससे अुसे सतोष नही होगा, क्योकि अुसे बचपनसे अेक और चीजको अिससे अधिक चाहनेकी तालीम मिली है, अर्थात् हमेशा आगे आनेकी और चकाचौध पैदा करनेवाली परिस्थितिमे रहनेकी। अुसे धाधली चाहिये, शाति नही, फिर भले वह धाधली आग बरसानेवाले बॉम्बर हवाअी जहाजकी और मानवजातिके सर्वनाशकी ही क्यो न हो। किसी प्राणीके जीवनके लिअे, सादगीके लिअे और सदाचरणके लिअे अुसके मनमे आदर नही रहा। स्वतत्रताका भी बलिदान कर दिया जाता है। मौजूदा शिक्षा-प्रणालीका — पुरानी तालीमका — केन्द्रबिन्दु भौतिक शास्त्रो द्वारा सामर्थ्य बढाते जाना है।

नअी तालीमका सन्देश अिससे अुल्टा है। वह भलाअीका विकास करना चाहती है, सामर्थ्यका नही, अपने विद्यार्थियोमे — फिर वे बालक हों या बडे — वह लडाअी और झगडेके बजाय शाति और सुमेलका, सादे आनदोका, सादी सुख-सुविधाओका, सचाअीका तथा नीतिमत्ताका प्रेम, काम करनेका आनन्द और स्वतत्रताका जोश पैदा करना चाहती है। वह जीवित प्राणियोको अेक बड़े यत्रके दातोकी तरह नही मानना चाहती, ताकि वे अुसके साथ मेल खाय तो ही किसी महत्त्वके रहे,

अन्यथा जरासी भी आनाकानीके बिना 'खतम' कर देने योग्य माने जाय।

चरखा अिस प्रकारकी सस्कृतिके विकासके लिअे सबसे अधिक महत्त्वके स्थूल साधनोमे से अेक है। वह केवल पुराने जमानेका सूत पैदा करनेवाला यत्र नही है। वह तो अेक अैसा केन्द्र है, जिसके चारो ओर शान्तिकी सस्कृति खडी की जा सकती है। अिसलिअे अुसे शिक्षाकी सारी मजिलोमे केन्द्रीय स्थान दिया जाना चाहिये। बचपनसे ही चरखा बालकके जीवनका अेक अग न बने और अुसके जीवनके अन्त तक वैसा न रहे, तो खादी स्वय ही जड नही जमा सकती। चरखा गाधीजीके सारे रचनात्मक कार्यक्रमका प्रतीक है। अिसका जब हम विचार करते है, तो अुन्होने 'लोकसेवक-सघ' नामक अपनी अन्तिम टिप्पणीमे (देखिये 'हरिजन', १५–२–'४८) जो यह जोर दिया है कि लोकसेवकको "ग्रामीण लोगोकी जन्मसे लगाकर मृत्यु तककी शिक्षाकी व्यवस्था 'नअी तालीम' के मार्ग पर, हिन्दुस्तानी तालीमी सघकी निश्चित की हुअी नीतिके अनुसार करनी चाहिये", अुससे कोअी आश्चर्य नही होता।

'शिक्षण अने साहित्य', मार्च १९४८

१२

अितिहासका ज्ञान

पिछले पचास वर्षोसे विद्वानोने अितिहासके ज्ञानकी बडी महिमा गाअी है, और अनेक दिशाओमे अैतिहासिक शोध करने तथा अनेक विषयोका अितिहास लिखनेकी काफी कोशिश हुअी है। अपने देश, जगत् तथा जीवनकी अनेक बातोका पिछला अितिहास जानना मनुष्यकी सर्वांगीण और सामान्य तालीमका आवश्यक अंग माना गया है। अर्थ-शास्त्रियोमे अितिहासवादियोका अेक सम्प्रदाय ही है। कम्युनिस्ट अपनी विचारसरणीको अैतिहासिक सत्यो पर ही आधारित मानते है और अुस परसे मानव-जीवनके भविष्यके सम्बन्धमे निश्चित मत प्रतिपादित करते है। अैतिहासिक ज्ञानकी महिमामे से अितिहासको 'सुरक्षित रखनेका' भी अेक आग्रह पैदा हुआ है और वह अिस हद तक बढा है कि मानवके आदियुगके नमूने लुप्त न हो जाय, अिसलिअे कुछ पुरातत्त्व-वादियोका विचार है कि जंगली व पिछडी हुअी जातियोको अुनकी आदिदशामे ही रहने दिया जाय। अैसे लोग भी है, जो अनेक रूढियो तथा संस्थाओको आजके जीवनमे अर्थहीन और असुविधाजनक होते हुअे भी अितिहासको सुरक्षित रखनेके लिअे बनाये रखना चाहते है।

जब अितिहासका अितना ज्यादा महत्त्व माना जाता हो, तब मेरे यह कहनेमे धृष्टता मालूम होगी कि यह मान्यता लगभग वहमकी कोटिकी है। मगर बडी नम्रतासे मै कहना चाहता हू कि अितिहासके ज्ञानका जितना महत्त्व माना जाता है, अुतने महत्त्वका पात्र वह नही है। अिसमे पीतलके गहनेको सोनेका गहना मान लेने जैसी ही भूल की जाती है।

सच बात तो यह है कि किसी भी घटनाका सोलह आने सच्चा अितिहास हमें भाग्यसे ही मिलता है। खुद ही की हुआी और कही हुआी बातोंकी भी याददाश्त अितनी तेजीसे धुधली पड जाती है कि थोडे समय बाद अुसमे सत्य और कल्पनाका मिश्रण हो जाता है। किसी मानसशास्त्रीने अेक प्रयोगका वर्णन किया है। विद्वानोकी सभामे अेक नाटचप्रयोग किया गया। अुसमे अेक दुर्घटनाका प्रदर्शन किया गया। प्रयोगके साथ ही अुसकी फिल्म भी अुतार ली गआी। प्रयोग कुछ मिनटोका ही था। प्रयोग होनेके आधे घटे बाद श्रोताओसे कहा गया कि अुन्होने जो देखा अुसका ठीक ठीक वर्णन लिखे। नतीजा यह आया कि तीस साक्षियोमे से अेक दोके वर्णन तो फिल्मके साथ ८० फीसदी मिलते थे, शेष सबके वर्णनोमे ४० फीसदीसे ६० फीसदी तककी भूले निकली।

अिसमे आश्चर्य करने जैसी कोआी बात नही है। जब तटस्थ और सावधान साक्षी भी घटनाओको यो तेजीमे भूल जाते है, तब फिर जिनमे घटनाओको जन्म देनेवाले तथा अुन्हे लिख रखनेवाले लोगोका कोआी रागद्वेष — पक्षपात वगैरा हो, अुनके वर्णनोमे अगर सचाआीका हिस्सा कम हो और जैसे जैसे समय बीतता जाय, वैसे वैसे ज्यादा कम होता जाय, तो अिसमे आश्चर्यकी क्या बात है? वर्तमान घटनाअे भी अेक ही दिनमे अैसी सशयास्पद बन सकती है कि सच सच घटना क्या घटी, यह कभी भी निश्चयपूर्वक नही कहा जा सकता। कल तक कलकत्तेकी 'काल कोठरी' की बातको सभी विद्यार्थी और शिक्षक सच्ची घटना समझते थे। वही अब गप साबित हुआी है। अभी हाल ही मे पडित सुन्दरलालजीने यह बतलाकर हमे आश्चर्यचकित कर दिया है कि सोमनाथको लूटनेकी बात भी सच नही है। अगस्त १९४६ के बाद देशभरमे होनेवाले हिन्दू-मुस्लिम अत्याचारो और दगोका सोलह आने सच्चा अितिहास कभी भी नही मिल सकेगा। कृष्णका सच्चा जीवनचरित्र कौन जान सकता है? रामका ही नही

अीसामसीहका भी कभी जन्म हुआ था या नही, और अुन्हे क्रॉस पर चढाया गया था या नही, अिस पर भी शका की गअी है। शेक्सपीयरके नाटकोके सम्बन्धमे प्रेमानन्दके नाटको जैसा ही विवाद है। अिधर विद्वानोमे अिस सम्बन्धमे चर्चा चली है कि कालिदास कितने हो गये है।

अिस तरह जिस अितिहासके ज्ञानकी हम महिमा गाते है, वह भले ही अितिहासके नामसे और सेक्रेटरियेटके दफ्तरो तथा प्रत्यक्ष भाग लेनेवालोके मुहसे सुनकर लिखा गया हो, फिर भी वह अुपन्यास या सम्भाव्य घटनासे ज्यादा कीमती नही होता। अिसका वाचन और पिछली कडियोको खोजने और जोडनेकी बौद्धिक कसरत मनोरजक अवश्य है, मगर शेक्सपीयर, कालिदास, बर्नार्ड शॉके अुत्तम नाटको, या पौराणिक वार्ताओ तथा परपरागत दतकथाओसे ज्यादा कीमत न तो अिसकी करनी चाहिये, और न अुनसे ज्यादा अिसके ज्ञानका मोह रखना चाहिये।

अितिहास पढकर भूतकालके सम्बन्धमे हम जो कल्पनाअे करते है, वे योग्य मात्रासे बहुत ज्यादा व्यापक रूप लिये होती है। और अुन परसे हम जो अभिमान या द्वेष अपने दिलोमे पालते है, वे तो बेहद अनुचित होते है। प्रजाजीवनके वर्णनोमे प्रजाके बहुत ही थोडे भागके जीवनकी जानकारी अुसमे दी हुअी रहती है, मगर हम समझ लेते है कि वह पूरी प्रजाकी हालतका वर्णन है। भूतकालमे भी समृद्धि थी। बडे बडे नगर थे, नालदा जैसे विद्यापीठ थे; अिस जमानेमे भी है। मगर हमे अैसा नही लगता कि आजकी तरह अुस समय भी थोडे ही लोग अुस समृद्धिका अुपभोग करते होगे, ज्यादातर लोग गरीब ही होगे, गुरुकुलोका लाभ गिनेचुने लोग ही लेते होगे; गार्गी जैसी विदुषी कोअी हर ब्राह्मणके घरमे नही होगी; अनेक ब्राह्मणिया तो आज जैसी ही निरक्षर होगी, और दूसरे वर्णोके स्त्री-पुरुष भी आज जैसे ही होगे। मगर हम समझते है कि अुस समय तो सभीकी हालत

अच्छी ही थी, बादमे बदल गअी। लेकिन बहुत बडे प्रजा-समूहके लिअे अैसा कहा तक कहा जा सकता है, अिसमे शका ही है।

शिवाजीने अुस जमानेके मुसलमान राज्योके खिलाफ मोर्चा लिया और स्वतत्र हिन्दू राज्यकी स्थापना की, अिस परसे मराठा मात्रको लगता है कि मुसलमानोसे द्वेष करना अुनका कुलधर्म है, अिसी न्यायसे शिवाजीने सूरतको लूटा था, अिसे पढकर मेरे अेक बचपनके साथीको, जिसके पूर्वज सूरतमे रहते थे, अैसा लगता था कि शिवाजी और मराठे सब लुटेरे ही थे और महाराष्ट्रीयोके प्रति घृणा रखनेमे अुसे कुलाभिमान मालूम होता था। अगर अितिहास जैसी कोअी चीज न हो, मनुष्यको भूतकालकी कोअी स्मृति ही न रहती हो, तो देश-देश और प्रजा-प्रजाके बीचकी दुश्मनियोको पोषण न मिले। अभी तक अैसी कोअी प्रजा या व्यक्ति नही हुअे, जिन्होने अितिहास पढकर कोअी शिक्षा ली हो और समझदार बने हो।

सच पूछा जाय तो अितिहास स्मृति या याददाश्तका ही दूसरा नाम है। क्योकि ज्यादातर अितिहास लिखनेकी प्रवृत्ति अुस समय नही होती जब कि स्मृति ताजी होती है, बल्कि अुस समय होती है जब वह धुधली पड जाती है और सच्ची घटनाये जाननेके साधन भी लुप्त होने लगते है। मगर ताजी और सच्ची स्मृति भी मनुष्यको मिला हुआ वरदान ही नही, बल्कि शाप भी है। दो गायोके बीच सहानु-भूति — प्रेम सदा रहता है। अुनके बीच हुआ झगडा क्षणिक होता है, क्योकि अुनकी याददाश्त बहुत कमजोर होती है। और जब झगडा न हो, अुसकी याद भी न हो, तब अुनकी आपसकी सहानुभूति स्वभाव-सिद्ध होती है। मगर मनुष्य स्मृतिको ताजी रखकर ज्यादातर द्वेषको ही जीवित रखते है, यानी सहानुभूतिको — प्रेमको घटाते है। स्वभावसिद्ध सहानुभूति — प्रेम अगर किसी खास कर्म द्वारा व्यक्त किया गया हो, तो वह याद रहता और पुष्ट होता है, मगर अुसके अभावमें

या अुसे भुला सकनेवाला झगडा कही अेक बार भी हो जाय, तो वह स्मृति द्वारा लम्बे अरसे तक टिकता है।

यह सब देखते हुअे मुझे नही लगता कि अितिहासका शिक्षण काव्य-नाटक-पुराण-अुपन्यास वगैरा साहित्यके शिक्षणसे ज्यादा महत्त्व रखता है। अितिहासका अज्ञान अेकाध प्रसिद्ध नाटक या काव्यके अज्ञानसे ज्यादा बडी खामी नही है। अिसे मनोरजक साहित्यका ही अेक विभाग समझना चाहिये।

आजका मानव-जीवन अितिहासका ही परिणाम है। हमे वर्तमान मानव-जीवनका अच्छी तरहसे निरीक्षण करना चाहिये और अितिहासकी कैदमे पडे बगैर अुसकी समस्याओका हल खोजना चाहिये। अैसा भय रखनेका कोअी कारण नही है कि अितिहास टूट जायगा या अुसकी परम्परा कायम नही रहेगी। क्योकि अुसके सस्कार तो पहलेसे ही हमारे जीवनमे दृढ हो चुके हैं। अिसलिअे चाहे जितना प्रयत्न कीजिये, अुसकी कारण-कार्य शृखला टूट ही नही सकती। जो अुपाय हम सोचेंगे, वे हमे भूतकालके किसी सस्कारमे से ही सूझेंगे, यानी बिना पढ़े हुअे अितिहासमे से ही सूझेंगे। पढ़े हुअे अितिहासका अुलटे अिसमे विघ्न-रूप होना ही ज्यादा सभव रहता है।

अगर अितिहास न होता, तो झडेके चक्रकी अशोकके धर्म-चक्रसे या कृष्णके सुदर्शन चक्रसे तुलना करनेकी अिच्छा न होती, और चाद-तारेके झडेको भी महत्त्व न मिलता। अितिहासका ज्ञान क्षीण होनेके कारण जिस तरह मध्यकालमे हिन्दुस्तानमे आये हुअे शक, हूण, यवन, बर्बर, असुर वगैरा लोगो तथा अुनके धर्मो और आर्योके बीच आज कोअी स्वदेशी परदेशीका भेद नही करता या हिन्दूकी 'सावरकरी' व्याख्या पढने नही बैठता, अुसी तरह आज मुसलमान, अीसाअी, पारसी वगैराके सम्बन्धमे भी हुआ होता। पौराणिक चतु:सीमाके अनुसार अरबस्तान, तुर्कस्तान, मिस्र, बरमा वगैरा सब देश भरतखंडके ही देश माने जाते। जस तरह अिति-

हासके अज्ञानके कारण कुछ लोग मानते है कि सारे पुराण अेक ही कालमे और अेक ही व्यक्ति द्वारा लिखे गये है, अुसी तरह सारे धर्म सनातन धर्मके ही भेद समझे जाते । अितिहास पढनेके परिणाम-स्वरूप हम दूसरोसे अलग होना सीखे है, मिलना नही।

शिक्षणमे अितिहासको गौण स्थान देनेकी जरूरत है । अुसकी कीमत भूतकाल सम्बन्धी कल्पनाओ अथवा दन्तकथाओके बराबर ही समझनी चाहिये।

'जडमूलसे क्रान्ति', ३०-१-'४८
